

प्रस्तावना

समस्याओं की ओर से यह मान-अवलोकन नये बर्तानवालों की मनीषात्मक
कल्पितों से नहीं है अनेक प्रकार की बर्तानियाँ प्रस्तुत कर रहा है। अभी
तक हमारे बर्तानवालों के चले चले में समाज के विकास पर बड़ी
आलोचना करने समाज-अवलोकन तथा अवलोकन कामें बिना जिसमें
उद्देश-प्रधान तथा भाव-पूर्ण का एक समाजशास्त्री स्वयं ही एक प्रकार के
पाठकी की स्थिति तथा योगदानों का करने के लिये पर्याप्त सम्मान जाना रहा।

[illegible]

प्रकाशकीय

अधुना समस्त न कल्पितो नो अतो नान्यदुक्तं यत्तत् सत्यं है
 ता विनी श्री यत् के लक्षण के लिए ली है । निम्न-लिखित श्लोकों से ज्ञेय
 निम्न-लिखित कल्पितोक्तों से ज्ञेय निम्न कल्पितोक्त कल्पितोक्त नान्यदुक्त
 यत्तत् सत्यं है । ता विनी इत्यादि कल्पितोक्तों के लक्षण ली है । अतः
 यत्तत् सत्यं है । ता विनी इत्यादि कल्पितोक्तों के लक्षण ली है ।

[illegible]

॥१॥

— १११ —

पूर्व बसनापूर्व, विषयपूर्व तथा नाशकाल आदि सभी अंतर्गतों से मिली गई और समस्त मनानका कोई ऐसा विषय नहीं रहा जिसे कहानियों ने स्वयं न किया हो

इस युगमें कहानी और विवेका दो अत्यन्त प्रबल भाव-निराशाके साथ-साथ जाने जाने हे और इसीलिए सत्कारके सभी देशों में इन दोनों साधनोंका प्रयोग लोक-शिक्षाके लेकर आदिषि और व्यापार-साधनोंके विज्ञापन तक में हो रहा है। इसलिये इनका उचित परिमार्जन अत्यन्त अवेक्षित तथा अनिवार्य है।

मुझे यह उल्लेख करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि श्री अमिलेताचण्ड उपाध्याय एम० ए०, बी० ए० ने अत्यन्त अध्यवसाय तथा परिश्रमसे पहले व्यक्तिकी प्रधानता न देकर कलाकृतिको बरीयता देकर इस वर्ष-सूचकके लिये कहानियोंका संग्रह अत्यन्त विवेकपूर्व शैलिकवाद के साथ किया है। मुझे विश्वास है कि छात्र इनका आनन्द लेंगे और द्वितीय समार इनका आदर करेगा।

काशी,

नवम्बर १मी, २००८

(२९ ५.५१)

सीताराम चतुर्जंघी

कहानी पर दो शब्द

कहानी क्या है ? यही प्रश्न प्रश्न है जो कहानी नाम के शब्द पर हमारे सामने आता है । पारभाषा जगदीश बुद्ध साहनी का कहना है कि कहानी पढ़ी संवत्सी आसवासा । यह भी जना दीक दीक दुःखमय ही सब है । अब हम उसे पढ़ें । तो जो किताब पढ़कर ने कहानी की परिभाषा दे रही है—'कहानी भट्ठाकी या सदस्य बन है जो किताब पढ़कर पर बुद्धि' ।' आते से बाद वह भी कहानी किताब कहान् भट्ठा की परिभाषा देकर लास है । यह भट्ठा समीपदुर्ग, साधारण से मिल कोर सातव द्वाक के 'कहा भट्ठा' शब्द की जगह कहान् भट्ठा ही ले है ।

कहान् भट्ठा किताब भट्ठा से कहानी की परिभाषा देता है । जगदीश बुद्ध साहनी का कहना है कि कहानी पढ़ी संवत्सी आसवासा । यह भी जना दीक दीक दुःखमय ही सब है । अब हम उसे पढ़ें । तो जो किताब पढ़कर ने कहानी की परिभाषा दे रही है—'कहानी भट्ठाकी या सदस्य बन है जो किताब पढ़कर पर बुद्धि' ।' आते से बाद वह भी कहानी किताब कहान् भट्ठा की परिभाषा देकर लास है । यह भट्ठा समीपदुर्ग, साधारण से मिल कोर सातव द्वाक के 'कहा भट्ठा' शब्द की जगह कहान् भट्ठा ही ले है ।

उपन्यास और कहानी जीवन की एक झलक मात्र हैं। उपन्यास में हम जितने विस्तार के साथ बड़ने हैं कहानी में नहीं जा सकते। इसलिए अच्छी कहानी के लिए घटनाओं की शृंखला बहुत लंबी न होनी चाहिए। समय का भी ध्यान आवश्यक है। कहानी के लिए घटित होने वाला समय बहुत लंबा न होना चाहिए। समय की लंबाई कहानी में सिधिलता ला देती है। कम समय और कम घटनाये कहानीकार को कहानी के सजीव मोन्दर के बकाने का अवसर प्रदान करती है।

जितने समय की घटनाओं का वर्णन कहानी में लाया जाय—इसके लिए कोई नियम नहीं हो सकता परन्तु हमका ध्यान रखना आवश्यक है कि केवल मुख्य मुख्य घटनाओं का ही वर्णन दिया जाय।

कहानी का हृदयपाही होना ही उनकी सफलता है। जिस ध्येय और भावना से जिस स्थल पर लेखक ने जो कुछ लिखा है यदि उसी रूप में पाठक ने उन्हें ग्रहण न कर पाया तो कहानी सफल नहीं मानी जा सकती। यह तभी सम्भव है जब प्रत्येक घटना और पात्र का चित्रण स्वाभाविक हुआ हो। लेखक जब तक अपने को कहानी में वर्णित प्रत्येक परिस्थिति और पात्र के रूप में रखने में समर्थ नहीं है तब तक उसकी लिखी हुई कहानी आकर्षक नहीं हो सकती।

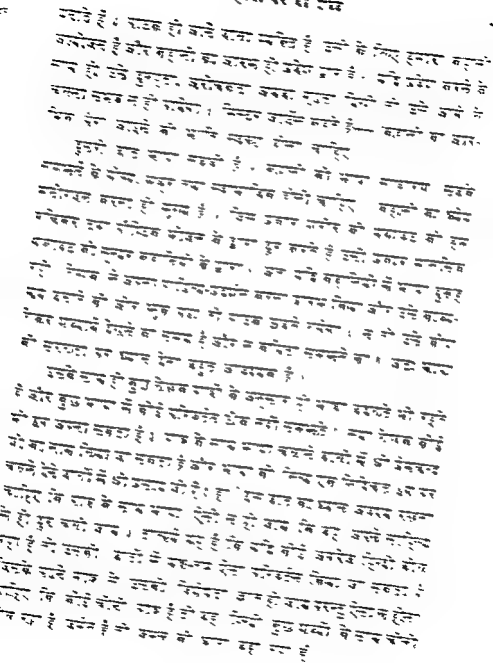
कहानी का कथानक (Plot) पहिले से निश्चित होना चाहिए। कुछ लेखक बिना पूरा कथानक समझ रखे ही लिखना प्रारम्भ कर देने हैं। परिणाम यह हाता है कि वे अंधरे में टटोलते हुए चलते हैं और बहुधा मार्ग भ्रष्ट हो जाते हैं।

कहानी में पात्र भी जितने ही कम हों वह उतनी ही अच्छी होगी। अधिक पात्रों का सम्भाव्य उपन्यास न हो सकता है। उक्त लेखक अपनी सुविधानुसार उपन्यास की समाप्ति के पूर्व ही जहाँ चाहे छोड़ सकता है।

[illegible]

अनि आवश्यकता है। यदि कहानी लेखक ने अपना सन्निष्क विकसित कर लिया है तो मार्ग चलने भी बहुत अनेक कथानक प्राप्त कर सकता है। वह दोष मिलने के पश्चात् ही कहानीकार का कार्य प्रारम्भ होता है। वह अपने परिश्रम और कोशिश के द्वारा उसे एक मौलिक इति में ढालकर आकर्षक बना देता है। कहानी लेखक को अपनी स्मरण-शक्ति का सम्पूर्ण उपयोग पर उसे हुए कहानी के योग्य विचारों को प्रकट करने रहना चाहिए। उसे अपने वातावरण का भी अच्छा अध्ययन करने रहना आवश्यक होता है। देखने हम सभी लोग हैं। परन्तु यदि एक घट दृष्टि के पश्चात् कोई हमसे पूछे कि मार्ग में हमने क्या क्या देखा और क्या विचार प्राप्त पाई तो सम्भव है कि मार्ग मोड़ी मोड़ी जगहों को छोड़कर हम अधिक न बता पायें। कहानी लेखक को सर्वत्र सजग और सचेत रहने की आवश्यकता है।

कहानी की सफलता बहुत कुछ प्रारम्भ पर निर्भर है। "होनहार विद्या के राज चौकने पार" वाली कहावत यही भी सन्निर्देश होती है। अब कहानी-लेखक की ओर भ्रमण करने की कुछ बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। पहिली बात यह है कि कहानी का प्रारम्भ स्पष्ट और आकर्षक होना चाहिए। कहानी के कुछ प्रारम्भिक वाक्यों में ही यदि हमारे मन का अपनी ओर नहीं खींच लिया तो उसका सफलता में सन्देह है। हमारे सामने यह पूर्ण कहानी प्रकट रहनी है और वह उसे किसी भी प्रकार आकर्षक कर सकता है। परन्तु उसका यह सम्भवता ही नहीं कि उसी के समान पाठक भी आकर्षित करने ही कहानी सम्भव है। लेखक को अपने ही पाठक की स्थिति में सम्पूर्ण सम्बन्ध की आवश्यकता है। सभी वह सम्भवता है कि वह प्रारम्भ में ही आकर्षक बन सके या सफल है। किसी अनिवार्य के साथ ही उसका सम्बन्ध करने के लिए, उसे न बचाने के लिए हम पर ही निर्भर है कि वह सम्भव है और सम्भव है कि आकर्षक प्रारम्भ द्वारा



कहानी में छोटी बात जो ध्यान देने की है वह पात्रों को कम रखना है। बहुत से लेखक अनेक पात्रों और अनेक स्थानों का नाम कहानी में भर देते हैं। परन्तु ऐसा किसी भी दशा में न होना चाहिए। पाठक धीरे-धीरे पात्रों और स्थानों से परिचित होता है और एक छोटी सी कहानी में बहुत अधिक पात्र ला देने में न तो सबका चित्रण ही सुन्दर किया जा सकता है न उसका समुचित विकास ही हो पाता है। पात्रों में नायक का भी प्रवेश यथासोघ्र होना चाहिए। अधिक पात्र और स्थल के लोभी लेखक को कहानी की ओर न आकर उपन्यास की ओर झुकना चाहिये जिसमें तात्त्विक रूप में अधिक अन्तर न होकर थोड़ा ही परिवर्तन लाना आवश्यक होता है।

कहानी में हम अपनी सुविधानुसार जो चाहें नहीं लिख सकते। अतः कहानी की एक निश्चित रूपरेखा पहले से बनी रहनी चाहिये। उसमें अनगल बातें कभी भी न लाना चाहिये। रसों के निर्वाह का भी ध्यान रखना आवश्यक है। यदि हास्यरस की कहानी है तो करुणापूर्ण वर्णन न लाना ही उत्तम है।

चतुर लेखक पात्रों के कथोपकथन द्वारा ही अपना उद्देश्य पूरा करता है। वह स्वयं कुछ नहीं कहता। कथोपकथन जितना ही नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया जा सके कहानी उतनी ही आकर्षक होगी।

कहानी का प्रारंभ किसी घटना से हो तो यह अधिक आकर्षक हो सकती है। यकायक कोई धड़ाका हुआ और चारों ओर ने लोग जमा हो गये। जांच, पृष्ठा और समाधान होने पर लौट गये। ठीक ऐसी ही घटना ने प्रारंभ होने वाली कहानी पाठकों को खींच लेनी और उनको जिज्ञासा के बल पर उन्हें अपने में व्यस्त रखती है।

इन सब बातों को ध्यान में रखकर कहानी लेखक को आगे बढ़ना चाहिए। परन्तु कुछ स्थानाविक वर्णन भी होनी है जो लेखक को सहायता देने वाली होती है। उसका अपनी शक्ति और अनुभव ध्यान बढ़ाने की शक्तियों के द्वारा

पर भी कहानी को अच्छा बना सकती है। इतना अवश्य ध्यान रखना होगा कि कहानी केवल मनोरञ्जन का साधन नहीं है। उसने पाठक को कुछ सीख भी देनी है। परन्तु यदि हमने कहानी में ही शिक्षा देना प्रारम्भ कर दिया ॥ वह पाठक को उबाने वाली हो जायगी। अतः इस ध्येय की पूर्ति अत्यन्त और चतुर्यपूर्ण ढंग से ही होती चाहिये।

अन्य भी कहानी का ऐसा हो जिसे पढ़कर पाठक के मन में एक अनुनि बनी रहे और वह अधिक कहानी पढ़ने का इच्छुक बनता जाय।

कहानी कहने के ढंग के दृष्टिकोण से देखें तो इसे दो रूपों में रखा जा सकता है। एक तो प्रथम पुरुष में और दूसरे अग्न पुरुष में। पहिले प्रकार की कहानी में उन्हीं के जीव का कोई पात्र आप बीबी मुताना चलता है। १० मीना-गम जी चतुर्वेदी की कहानी “मैं कस जा रहा हूँ” इसी श्रेणी की है। दूसरे प्रकार की कहानियों में शेषक एक तटस्थ व्यक्ति के समान दूसरी पर घटने वाली घटनायें देखा चलता है। दोनों ही ढंग सुन्दर हैं। चतुर लेखक जिस मार्ग को भी अपनावे कहानी के बतावे हुए नियमों को दृष्टिकोण में रखा हुआ उसे सजोष और रोचक बना सकता है।

कहानियाँ कितने प्रकार की हो सकती हैं वह बतलाने के लिए पर्याप्त समय और स्थान की आवश्यकता है। हमारे सामाजिक तथा वैयक्तिक जीवन का उठाने के लिये कितनी बातें आवश्यक हैं उसने ही प्रकार की कहानियाँ भी हो सकती हैं। विभिन्न विभिन्न दृष्टिकोण रखने के कारण सभी कहानी लेखक विभिन्न मार्ग का अनुसरण करने हैं। कुछ आदर्शवादी हैं उनका विचार है कि हमारे सामने एक ईसा आदर्श ज्ञाता व्यक्ति जिसे हमने हुये हम उसी अग्नि के लिये आग बरून से प्रकटगोचर हो सके। श्री बन्दावतलाल शर्मा की कहानी इसी प्रकार की है। आदर्शवादी तथा सत्यवादी हैं कि जब तक समाज का निर्माण नहीं होता तब तक समाज के अन्तर्गत ही हम पाठक को समझाने का मार्ग खोज सकते हैं। उन कहानियों का

आत्माराम

प्रीति प्रकाश

वेरी रात में महादेव मुनार एक सुविश्रान आरमी पा
बहु अपने मायदान में प्रात में सुष्या तक अर्धांगी के सामने बैठा हुआ
नट किया करता था। वह कपानार प्वनि मुनने के लोग इनने अभ्यस्त
गये थे कि जब किसी कारण से वह बन्द हो जानी तो जान पड़ता था कि कं
बीज तायक हो गई है। वह नित्य प्रति एक बार प्रातःकाल अपने तौ
का पित्रा लिये, कोई भजन गाना हुआ गालात्र की ओर जाता था। उ
धुंधले प्रकाश में उमका ज्वर मरीर, पोपका बूँद और भुकी हुई कमर दे
कर किसी अनिर्दिष्ट मनुष्य का उमके पिशाच होने का भ्रम हो सकता था
जो ही लोमो के काना में आवाज आती—“मत्त गुरुदत्त निवदत्त दादा
लोग समझ जाते कि भोर हो गया।

[illegible]

मुनि मुनी कहता । क्या ही बन्दह-मान्य हाथी अपने नाच की ओर दायर
 पुरार उठता—“मम मुरदन शिवदन दाता” इस मन्त्र ने अपने ही उगड़े
 चित्त की पूर्ण शान्त प्राप्त हो जाती थी ।

121

एक दिन महाशयन विनी लटकें न पिचड़ का डार था-न दिया ।
 भाग उठ गया । महाशय ने जो मिर उठाकर पिचड़ें की ओर देखा वी उनका
 व उजा मध हो गया । उसने फिर पिचड़ें की ओर देखा मोठा मादक था ।
 महाशय धबकाकर उठा और धुध उधर गपरे दो पर भिगाह दोणने लगा ।
 उसे समझ न आई वस्तु धारी का ना मारी जाया था । लटकें-बांसी, नासी
 पासी ने उनका जी भर चुका था । लकड़ी की चुल्हान से उनके हाथ न
 बिजल पड़ना था । बारी न उन प्रस न था इतनी-ता कि उनके बागल
 अपने आनन्दमयी वु हरी न उन बीच न रह जाती गड़ना था । पदार्थमयी
 ने उस बिड़ का इतनी-ता कि व उलकी अगली से काग निकाल ने जाने
 प । होती दया से जाया हो उलकी लीन अगल था ।

[illegible]

आना-था । किमी ने ककड़ फेंके, किमी ने तालियाँ बजाई । तोता फिर उड़ा और यही से दूर आम के बाग में एक पेड़ की फुनगी पर जा बैठा । महादेव फिर झाली पित्रडा लिये मेड़क की नाँति उबकता हुआ चला । बाग में पहुँचा तो पेड़ के तन्तुओं में आम निकल रही थी, मिर चम्कर खा रहा था । जब जरा सावधान हुआ तो फिर पित्रडा उठाकर कहने लगा—
 “सल गुरदल शिबदल दाला ।” तोता फुनगी में उतर कर नीचे एक टाक पर बैठ गया, किन्तु महादेव की ओर मशक नेत्रों में ताकता रहा । महादेव पित्रडा छोड़कर एक पेड़ ही आड़ में हो रहा । तोने ते चारो ओर देखा और फिर आकर पित्रडों के ऊपर बामन लिया । महादेव का हृदय उछलने लगा । यह धीरे धीरे पित्रडे के समीप आया और लपका कि तोने को पकड़ ले, किन्तु तोला हाथ न आया, फिर पेड़ पर जा बैठा ।

साँझ तक यही हाल रहा । तोला कभी दधर, कभी उधर उड़ता, कभी अपने पीने की प्याली तो कभी भोजन को देखता और उड़ जाता । बुद्धा अगर मूर्तिमान मोड़ था, तो तोला मूर्तिमयी भाया । शाम हो गई और भाया मोड़ का सग्राम अन्धकार में विनीत हो गया ।

[३]

रात हो गई । चारो ओर निविड अन्धकार छा गया । तोला न जाने कनो में कहाँ छिपा बैठा था । महादेव जानता था कि रात में तोला कहीं उड़कर नहीं जा सकता और न पित्रडे में ही जा सकता है, निम पर भी वह उस जगह में टिलने का काम न लेता था । आज उसने दिन भर कुछ नहीं खाया, रात के भोजन का भी समय निकल गया । पानी तक उगने न सूझा था । परन्तु आज न तो उसे भुख थी और न प्यास । तोले के बिना उसे अपना जीवन निम्मा अण्ड और गुना जान पड़ता था । वह दिन-रात काम करता था । उमरिय दि वर उमकी अन्न ग्रन्था थी । वह जीवन के

କୌଣସି ବ୍ୟକ୍ତି ଯା, କ୍ଷମାପିତ୍ତ ଯେ କୌଣସି ସାମାଜିକ ଶ୍ରେଣୀର ବ୍ୟକ୍ତି ଏବଂ ସ୍ତ୍ରୀମାନଙ୍କୁ ଏହି
 କୌଣସି ସାମାଜିକ ଶ୍ରେଣୀର ବ୍ୟକ୍ତି ଯା ଯାଏନା ନାହିଁ ସେହି ଶ୍ରେଣୀର ବ୍ୟକ୍ତି ଏହି କୌଣସି
 ଶ୍ରେଣୀର ବ୍ୟକ୍ତି ଯା ଯାଏନା ନାହିଁ ସେହି ଶ୍ରେଣୀର ବ୍ୟକ୍ତି ଏହି କୌଣସି ଶ୍ରେଣୀର ବ୍ୟକ୍ତି
 ଯା ଯାଏନା ନାହିଁ ସେହି ଶ୍ରେଣୀର ବ୍ୟକ୍ତି ଏହି କୌଣସି ଶ୍ରେଣୀର ବ୍ୟକ୍ତି

[illegible][illegible]

“ਮਾਇ, ਮਾਇ, ਮਾਇ !” ਸਮੇਂ ਦੇ ਗਾਇਕ (ਭਾਵੇਂ ਮਾਂ ਜਾਂ ਪਿਤਾ)

महादेव शक्ति के ध्यान गया तो उस एक कल्पों स्था हुआ निता ।
 १२ मोर वन का प्रतीक था । महादेव का हृदय उज्ज्वल गया । उसने
 अपने वस्त्रों को पहना तो मोहरा था । उसने एक मोहर बाहर निकाला और
 शक्ति की उपासना करने लगे । मोहर ही था । अपने तुरन्त बलमा उपासना
 शक्ति के उपासना और वह भी नीचे लिखने में है । यह साधु से बार
 बन गया ।

उसे फिर मन्देह हुआ कि कहीं फिर चोर लोटन आये और जकेला पारु मुझसे मोहरें छीन लें । उसने कुछ मोहरें कमर में बांध ली और फिर एक गुल्ली लकड़ी में जमीन की मिट्टी हटाकर कई गड्ढे बनाने और उसे मोहरों से भरकर मिट्टी में डक दिया ।

[८]

महादेव के अन्तः नेत्रों के सामने अब एक दूसरा ही जगन् था । चिलास और कल्पनाओं में परिपूर्ण । यद्यपि अभी इस कोष के हाथ में निकल जाने का भय था मगर अभिलाषाओं ने अपना काम आरम्भ कर दिया था । एक एकका मकान बन गया, सराफे की एक बढ़िया दुकान खुल गई और निरमराधियों ने फिर नाता जुड़ गया । जब चिलास की सामग्रियाँ एकत्रित हो गईं तो तीर्थ-यात्रा पर जाने और लौटकर बड़े समारोह में यज्ञ और व्रत भइ हुआ । इसके पश्चात् एक भिवालया और एक कुँआ बन गया, उद्यान और उसमें क्या पुष्पों का आयोजन भी हो गया । साधु-मस्कार भी होने लगा ।

अकस्मात् उसे प्थान आया, वही धोर आ जाय तो मैं भागूंगा कंने ? उसने परीक्षा करने के लिए कलमा उठायो और दो सी पण लक बेइहाशा भागा चला गया । जान पड़ता था उसके पीरो में पर लग गये हें । चिलासान्त हो गई । इन्ही कल्पनाओं में रात व्यतीत हो गई । ऊषा का आयमन हुआ, हवा जमी, चिड़ियाँ जाने लगी । सहसा महादेव के कानों में आवाज आई—

मत्त गृहदल मिषदल दाता । गम क वर्ण में चित्त लागा ।”

यह आल मर्देव महादेव की जिज्ञासु रहता था । दिन में सहस्रो ही बार प शब्द उसके मन में निकलते थे पर उनका वास्तविक भाव उसके अन्तःकरण की शक्ति न समझ पा । उस विषय का वह मग निकलता है, उसी प्रकार उसके मन में जो जो विचार आते हैं, निश्चय और प्रभाव शून्य ।

तब उसका हृदयकक्षी वृक्ष पर पत्तार बिहोने था । वह निर्मल वायु उसे सुजातिन कर चुकी थी । पर अब उस वृक्ष में कोरलें और शाखायें निकल आनी थी । इन वायु-प्रवाह में वह झूम उड़ा, संभ उड़ा ।

अधोदेव का मनन था । प्रकृति एक अनुरागमय प्रकाश में डूबी हुई थी । इनो मनन सेना परों को संदाये हुए डेबो डाली ने उनका रंग आकाश में कोई नारा टूटे, और आकाश पिचड़े में बैठ गया । महादेव प्रकृतिमत्त होकर रोड़ा और पिचड़े को उड़कर बोला 'आओ आत्माराम, तुमने कष्ट तो बहुत दिया, पर मेरा जीवन भी सकल कर दिया । अब तुम्हें बाँझी के पिचड़े में गहूँरा और मोने में बैठ ईगा ।' उनके रोने रोने में परमात्मा के सुनातु-पाठ की ध्वनि निकलने लगी । अनु तुम बिउने दयावान हो । यह मुन्हाग अलीन बाल्य है, नहीं तो मुक्त रंगी पतिउ बायी कब रन कृपा के योग्य था । इन पवित्र भावों में उनकी आत्मा विभूत हो गई, यह अनु-रक्त होकर बोले उदा—

“मन मुदत विवदम शब्दा । राम के चरण में विन लगता ।”

उसने एक हाथ में पिक्का लट्ठिकावा बरतन में सत्तया इबाया और घर
जाया ।

14

महाराज पर दुर्गा तो बड़ी कुछ खेरी थी । तबसे मैं एक कुन के
 सिवाय और किसी में भी न हुई और कुनो को महाराज में देने नहीं होता ।
 उनसे कपड़े का एक भाग में दिया गया और उसे कपड़े में डाली गई
 एक कर अपनी कपड़ों में एक भाग में एक भाग में एक भाग में एक भाग में
 दुर्गादेव को के एक भाग में एक भाग में एक भाग में एक भाग में एक भाग में
 एक भाग में एक भाग में एक भाग में एक भाग में एक भाग में एक भाग में
 एक भाग में एक भाग में एक भाग में एक भाग में एक भाग में एक भाग में

न मूँह फेर लिया, यह अमरगन्ध मूँह नही ने आ पहुँची, मानस नही आज दिन भर दाना भी मयस्सर होगा या नहीं । दृष्ट होकर पूछा—“क्या है जी ? क्या कहने हो, जानते नहीं कि हम इस बेला पूजा पर रहते हैं ?”

महादेव ने कहा—“महाराज ! आज मेरे यहाँ सयनाराधन का कथा है ।”

पुणेहित जी विस्मय हो गये, कानों पर विश्वास न हुआ । महादेव के घर कथा होना उनकी असाधारण घटना थी, जितनी अपने घर में किसी भिक्षारी के लिये कुछ निवामना ।

पूछा—“आज क्या है ?”

महादेव बोला—“कुछ नहीं, ऐसी ही इच्छा हुई कि आज नगराज की कथा सुन लूँ ।”

प्रभात ही से तैयारी होने लगी । बंदो और अन्य निकटवर्ती गावों में मुपारी फिरी । कथा के उपरान्त भोज का भी न्योता था । जो मुनडा, आश्चर्य करना । यह आज रोज में दूर कैसे जमी ।

गंध्या समय जब सब लोग जमा हो गये, पण्डित जी अपने सिंहासन पर विराजमान हुये, तब महादेव सरा होकर उच्च स्वर में बोला—“भाइयो, मेरी मारी उमर छल कपट में कट गई । मैंने न जाने कितने जादूियों को दगा दिया, जितने मरे को खोटा किया, पर अब भगवान ने मुझपर दया की है, मेरे मूँह के कालिय को मिटा देना चाहते हैं । मैं सभी भाइयों से नम्रतापूर्वक कहना है कि जिसका मेरे जिम्मे जो कुछ आता हो, जिसकी जमा मैं मांग ली हो, जिसके बोले मान्य का खाटा कर दिया हो, वह आकर अपनी एक एक कौड़ी चुका ले, अगर कोई यहाँ न आ सके हो तो आप लोग उससे जाकर कह दीजिये कि मैं एक मांग तक अब जो बात आजकल अपना हिस्सा बनना चाहता हूँ । महादेव मांगों का काट काम नरत । सब लोग सभा में आ गये । काट मांगिक भाव से मित्र होकर बोला—“हम कहने में

이제 이 책을 읽는 것은 <한글서체>의 사용과 관련된 문제를 해결하는 데 도움이 될 것이다.

이제 이 책을 읽는 것은 <한글서체>의 사용과 관련된 문제를 해결하는 데 도움이 될 것이다.

이제 이 책을 읽는 것은 <한글서체>의 사용과 관련된 문제를 해결하는 데 도움이 될 것이다.

이제 이 책을 읽는 것은 <한글서체>의 사용과 관련된 문제를 해결하는 데 도움이 될 것이다.

이제 이 책을 읽는 것은 <한글서체>의 사용과 관련된 문제를 해결하는 데 도움이 될 것이다.

이제 이 책을 읽는 것은 <한글서체>의 사용과 관련된 문제를 해결하는 데 도움이 될 것이다.

이제 이 책을 읽는 것은 <한글서체>의 사용과 관련된 문제를 해결하는 데 도움이 될 것이다.

이제 이 책을 읽는 것은 <한글서체>의 사용과 관련된 문제를 해결하는 데 도움이 될 것이다.

이제 이 책을 읽는 것은 <한글서체>의 사용과 관련된 문제를 해결하는 데 도움이 될 것이다.

इसके पीछे तोर्ययात्रा करने चला जाईया । जाय नर भाइयों से मेरी बिनती है कि आप सब मेरा उद्धार करें ।”

एक माह तक महादेव लेनदारों की तरह देखना रहा । रात में उसे चोरा का भय में नींद न आती । अब वह कोई काम न करता । शराब का चक्का भी छूटा । साथ अश्वमेध जो द्वार पर जा बैठे उनका शयानोपम सुत्कार करना । दूर दूर तक उसका सुषय फैल गया । यही तक कि महीना पूरा हो गया और एक जादवी की अपना हिस्सा चुकाने न आया । अब महादेव का ज्ञान हुआ मसार में कितना सदम्यवहार है । अब उसे मालूम हुआ कि मसार बुरी के लिये बुरा है पर अच्छा के लिये अच्छा है ।

इस घटना को हुये पचास वर्ष बीत चुके हैं । आप देखो जाइय ना दूर ही से सुनहला जलम दिखाई देता है । यह अकुरु द्वार का बन्दर है । उसमें बिला हुआ एक बड़ा तालाब है जिसमें गुरु कमल खिले रहते हैं । उसकी मछलियाँ कोई नहीं पकड़ती । तालाब के चिन्तार एक विशाल सम्राधि है । यही आम्बाराम का स्मृति चिन्ह है । उसके सुषय में विभिन्न द्विप बलियाँ प्रचलित हैं । कोई कहता है, उसकी ऐनचरित्त पित्रदा स्वयं का चला गया, कोई कहता है कि वह सप्त मुण्डल रहन हुये अनभ्यास हो गया । पर यथायथ यह है कि उस पत्नी कपी चण्ड का निर्मी बिली कपी राष्ट्र न सम लिया था । सींग रहते हैं, आधी गल की अर्धी तक तालाब के चिन्तार आवाज आती है—

“मन मृगदम शिवदम जाना ।

राज के चरन में बिल लाया ।”

महादेव के विषय में भी बिनती ही अब श्रुतिश है । उनमें सबसे मान्य यह है कि आम्बाराम के सम्राधिरथ होने के बाद वह कई सन्ध्यासियों के साथ हिमालय चंड एवं आर वही से लोहचक्र न आया । उनका नाम आम्बाराम प्रसिद्ध हो गया ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

the, the 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 36, 37, 38, 39, 40, 41, 42, 43, 44, 45, 46, 47, 48, 49, 50, 51, 52, 53, 54, 55, 56, 57, 58, 59, 60, 61, 62, 63, 64, 65, 66, 67, 68, 69, 70, 71, 72, 73, 74, 75, 76, 77, 78, 79, 80, 81, 82, 83, 84, 85, 86, 87, 88, 89, 90, 91, 92, 93, 94, 95, 96, 97, 98, 99, 100, 101, 102, 103, 104, 105, 106, 107, 108, 109, 110, 111, 112, 113, 114, 115, 116, 117, 118, 119, 120, 121, 122, 123, 124, 125, 126, 127, 128, 129, 130, 131, 132, 133, 134, 135, 136, 137, 138, 139, 140, 141, 142, 143, 144, 145, 146, 147, 148, 149, 150, 151, 152, 153, 154, 155, 156, 157, 158, 159, 160, 161, 162, 163, 164, 165, 166, 167, 168, 169, 170, 171, 172, 173, 174, 175, 176, 177, 178, 179, 180, 181, 182, 183, 184, 185, 186, 187, 188, 189, 190, 191, 192, 193, 194, 195, 196, 197, 198, 199, 200, 201, 202, 203, 204, 205, 206, 207, 208, 209, 210, 211, 212, 213, 214, 215, 216, 217, 218, 219, 220, 221, 222, 223, 224, 225, 226, 227, 228, 229, 230, 231, 232, 233, 234, 235, 236, 237, 238, 239, 240, 241, 242, 243, 244, 245, 246, 247, 248, 249, 250, 251, 252, 253, 254, 255, 256, 257, 258, 259, 260, 261, 262, 263, 264, 265, 266, 267, 268, 269, 270, 271, 272, 273, 274, 275, 276, 277, 278, 279, 280, 281, 282, 283, 284, 285, 286, 287, 288, 289, 290, 291, 292, 293, 294, 295, 296, 297, 298, 299, 300, 301, 302, 303, 304, 305, 306, 307, 308, 309, 310, 311, 312, 313, 314, 315, 316, 317, 318, 319, 320, 321, 322, 323, 324, 325, 326, 327, 328, 329, 330, 331, 332, 333, 334, 335, 336, 337, 338, 339, 340, 341, 342, 343, 344, 345, 346, 347, 348, 349, 350, 351, 352, 353, 354, 355, 356, 357, 358, 359, 360, 361, 362, 363, 364, 365, 366, 367, 368, 369, 370, 371, 372, 373, 374, 375, 376, 377, 378, 379, 380, 381, 382, 383, 384, 385, 386, 387, 388, 389, 390, 391, 392, 393, 394, 395, 396, 397, 398, 399, 400, 401, 402, 403, 404, 405, 406, 407, 408, 409, 410, 411, 412, 413, 414, 415, 416, 417, 418, 419, 420, 421, 422, 423, 424, 425, 426, 427, 428, 429, 430, 431, 432, 433, 434, 435, 436, 437, 438, 439, 440, 441, 442, 443, 444, 445, 446, 447, 448, 449, 450, 451, 452, 453, 454, 455, 456, 457, 458, 459, 460, 461, 462, 463, 464, 465, 466, 467, 468, 469, 470, 471, 472, 473, 474, 475, 476, 477, 478, 479, 480, 481, 482, 483, 484, 485, 486, 487, 488, 489, 490, 491, 492, 493, 494, 495, 496, 497, 498, 499, 500, 501, 502, 503, 504, 505, 506, 507, 508, 509, 510, 511, 512, 513, 514, 515, 516, 517, 518, 519, 520, 521, 522, 523, 524, 525, 526, 527, 528, 529, 530, 531, 532, 533, 534, 535, 536, 537, 538, 539, 540, 541, 542, 543, 544, 545, 546, 547, 548, 549, 550, 551, 552, 553, 554, 555, 556, 557, 558, 559, 560, 561, 562, 563, 564, 565, 566, 567, 568, 569, 570, 571, 572, 573, 574, 575, 576, 577, 578, 579, 580, 581, 582, 583, 584, 585, 586, 587, 588, 589, 590, 591, 592, 593, 594, 595, 596, 597, 598, 599, 600, 601, 602, 603, 604, 605, 606, 607, 608, 609, 610, 611, 612, 613, 614, 615, 616, 617, 618, 619, 620, 621, 622, 623, 624, 625, 626, 627, 628, 629, 630, 631, 632, 633, 634, 635, 636, 637, 638, 639, 640, 641, 642, 643, 644, 645, 646, 647, 648, 649, 650, 651, 652, 653, 654, 655, 656, 657, 658, 659, 660, 661, 662, 663, 664, 665, 666, 667, 668, 669, 670, 671, 672, 673, 674, 675, 676, 677, 678, 679, 680, 681, 682, 683, 684, 685, 686, 687, 688, 689, 690, 691, 692, 693, 694, 695, 696, 697, 698, 699, 700, 701, 702, 703, 704, 705, 706, 707, 708, 709, 710, 711, 712, 713, 714, 715, 716, 717, 718, 719, 720, 721, 722, 723, 724, 725, 726, 727, 728, 729, 730, 731, 732, 733, 734, 735, 736, 737, 738, 739, 740, 741, 742, 743, 744, 745, 746, 747, 748, 749, 750, 751, 752, 753, 754, 755, 756, 757, 758, 759, 760, 761, 762, 763, 764, 765, 766, 767, 768, 769, 770, 771, 772, 773, 774, 775, 776, 777, 778, 779, 780, 781, 782, 783, 784, 785, 786, 787, 788, 789, 790, 791, 792, 793, 794, 795, 796, 797, 798, 799, 800, 801, 802, 803, 804, 805, 806, 807, 808, 809, 810, 811, 812, 813, 814, 815, 816, 817, 818, 819, 820, 821, 822, 823, 824, 825, 826, 827, 828, 829, 830, 831, 832, 833, 834, 835, 836, 837, 838, 839, 840, 8

$\frac{1}{2} \times \frac{1}{2} = \frac{1}{4}$

[illegible][illegible][illegible][illegible]

अन्ना में पंति मने बाजे है बाबू । हाँ फिर बाजे । अबकी अवश्य
 निज जानके दुबली है ? जो स्ना हुआ वे हैं पने पारन हुए ।
 डोक हो पना न हिनाब ? ... निज रये पने । डोको मने कनी अकली
 गरकीव बतलाई । अकला अब को निनी को मने लेना है ? नब के बुके ?
 कुलारी ना के राज ऐसे नही है : अकला तुम भी यह ना । अकला
 तो अब मैं बचना है ।

हो पता नुरलीवाना फिर आने बड गया ।

[३]

जाय करने नकल में डंडो दुई रोहिनी नुरलीवाने को मारी बाजे
 कुली गयी । अब भी उनने अनुभव दिया कि बच्चों के साथ रहने पार
 में बाजे करने काका छोटे काका रोहिनी कनी गयी बाबा—छिर यह मोडा भी
 कना मना बेबन है बाजे अकली भी कना ना। अब रहना है ? मन
 को बाव है जो बेबारा इन तरह मारा नाग छिरा है । रोहिनी कराने
 भी गीता ।

रोहिनी मन नुरलीवाने का क्षीय स्वर निकल तो कुली गयी में
 मुनारं गयी—बच्चों को बहलानेवाला, नुरलीवाना !
 रोहिनी रो मुनार कराने गयी मन हो मन—स्वर कना मोड है
 उनका ? बहुत दिनों तक रोहिनी को नुरलीवाने का यह मोड स्वर और
 उनकी बच्चों के डंडे रोहिनी के बाजे बाजे गयी । नहने के नहने
 बाजे और बने रोहिनी नुरलीवाना न आना । छिर और और उनकी
 गीते भी क्षीय मोड गयी ।

६१

न मन बड—

नहने के नहने बाजे अकली नकल को पार

बड़कर आशानुबिलम्बित केज-राशि मुला रही थी। इसी समय नीचे से गली में मुनाई पड़ा—“बन्ना को बहानेवाला, मिठाई वाला।”

मिठाईवाले का स्वर परिचित था, भट से रोहिणी नीचे उतर आई। इस समय उसके पति मकान में नहीं थे। हाँ उमड़ी बूढ़ा दादी थी। रोहिणी उनके निकट आकर बोली—“दादी चुपू मुपू के लिये मिठाई लेनी है। जरा कमरे में चक्कर ठहराओ तो। मैं ऊपर कैंस जाऊँ, काँई आता नहीं। जरा हटकर मैं भी बिक की आँख में बँडी रटूंगी।

दादी उठकर कमरे में आकर बोली—“ए मिठाई वाले ! इधर आना। मिठाईवाला निकट आ गया। बोला—“नो, कितनी मिठाई दूँ ? तई ऊपर की मिठाईयाँ हैं, रम बिरयो, कुछ कुछ मट्टी, कुछ कुछ मोड़ी और जायें-दार। बड़ी देर तक मुँह में टिकती हैं। जल्दी नहीं चूलती। बन्ने बन्ने पाव से खाते हैं। इन मुन्नों के बिना ये खाँखो की भी दूर करती हैं। हाँ कितनी दूँ ? चण्डी, गोल और पहलदार गोलीयाँ हैं। पैसे की सोलह देता हूँ।”

दादी बोली—“सोलह तो बहुत कम होती है। भला पन्नीस तो देते।”

मिठाईवाला—“नही दादी अधिक नहीं दे सकता। इतनी भी कैसे देगा हूँ यह अब से आपको क्या । खैर, मैं अधिक तो न दे सकूँगा।”

रोहिणी दादी के पास ही बँडी थी। बोली—“दादी, फिर भी काफ़ी सस्ती दे रहा है। चार पैसे की ले लो। ये पैसे रहे।”

मिठाईवाला मिठाईयाँ पिचने लगा।

“नो चार पैसे की द दो। पन्नीस न सही बीस ही दो। अरे हाँ ! मैं बूढ़ी हूँ, मोल भाव तो अब मुझ ज्यादा करना भी बहो आता।” कहते हुए दादी के पापन मुह की जगहो मुस्कानट भो फट निकली।

उनकी अटमेंटियो मे घर में कोशक मना रहता था। समय की गति—विधाना की सीमा। अब कोई नहीं है। दादी, प्राण निगले नहीं निकले। इमीलिये उन्ही बच्चों की सोच में निरन्तर हैं। वे सब जन्म में होंगे तो यही नहीं। आनिर नहीं न कहीं तो जन्मे ही होंगे। उस तरह रहता तो कुछ घुलकर भरता। इस तरह मुन-मनोप के साथ मरणा। इस तरह के जीवन में कभी-कभी अपने उन बच्चों की एक झलक भी मिल जाती है ऐसा जान पड़ता है, जैसे वे इन्हीं में उछल कूदकर हंग खेल रहे हैं। पैने की कमी पोछे ही है। आपकी क्या मे पैने तो काफी है। वो नहीं है, इन तरह उमी को पा जाना है।

रोहिणी ने अब मिठाईवाले की ओर देखा। देखा—उसकी आंखें आंखों से तर हैं।

इसी समय धुनू धुनू आ गये। रोहिणी ने लिपटकर उसका अचानक पकड़-कर बोले—“अम्मा मिठाई।”

“मुझसे लो”—कह कर तत्काल बागवत की वो पुस्तिका में मिठाईयें भरकर मिठाईवाले ने धुनू धुनू को दे दी।

रोहिणी ने भीतर में पीसे फेंक दिये।

मिठाई बाँटे ने पेटो उठाई और कहा—“अब हम बार पे पीने न लूँगा।”

दादी बोली—अरे-अरे, न-न, अपने पीने लिये आ भाई।”

किन्तु तब तक आने सुनाई पड़ा, उमी प्रकार मादक मृदुल स्वर में—
“बच्चों को बटलाने-बटलाने मिठाईवाला।”

सेठ छगामल कुछ अप्रसन्न हो कर बोले—“मेरी दशा इन आशीर्षों से कभी नहीं सुधर सकती। ये आशाएँ और विरवान मुझे मोठ के पत्र से नहीं छुड़ा सकने।”

मुनीम जी कुछ कहने को थे, परन्तु सेठ ने उन्हें हाथ के इशारे से रोक कर कहा—“मुनीम जी, आप मुझे बहलाने की बेवफा मन कीजिये। अब लोकाचार का समय नहीं रहा। मैंने आपको जिन काम के लिये बुलाया है उसे मुनिये और समझिये।”

मुनीम जी—“मुझे जो आज्ञा हो वह मैं सदैव करने के लिए—”

सेठ जी—“इसके कहने की कोई आवश्यकता नहीं। आगकी मेरे यहाँ रहते हुए २० वर्ष हो गये हैं। इनने दिनों में मुझे आपके विषय में पूरी जानकारी हासिल हो चुकी है। मुझे जितना विरवान आप पर है, उतना चुन्नी पर भी नहीं।”

मुनीम जी—“वह सब आपकी कृपा—”

सेठ जी—“कृपा नहीं, सच्ची बात है। अच्छा अब चुन्नी की बुद्धि-बादये।”

मुनीमजी उठकर बाहर गये और १० मिनट बाद लौटे। उनके साथ एक नवयुवक था, जिसकी आयु पच्चीस छब्बीस वर्ष के लगभग थी। मुनीम जी तथा नवयुवक दोनों सेठ जी के पर्लेट के पास बैठ गये।

सेठ जी कुछ देर आँख बंद किये पड़े रहे। तत्पश्चात् आँखें खोल कर बोले—“बेटा चुन्नी।”

नवयुवक—“जी। पिता जी।”

सेठ जी—“मैं तो अब दा जी चार दिन का मेहमान हूँ।”

मुनीम जी—“आप तो क्या जान किया करने हैं। आप अवश्य अच्छे ही जायस। क्या गलत मान्य कहे हैं कि अभी कोई बात नहीं

दिखाई। अगर वो ही ऐसी बातें मोच मोच कर तबियत परेशान किया करते हैं।”

बुद्धू—“यह बात क्या—”

मेठ जी हम के इन्तारे से पुत्र की रोक कर दोने—“पहिले मेरी सब बातें सुन लो, फिर जो जो चाहे कह लेना। हाँ, तो यदि मैं बल ही बल तो करने पीछे तुम्हारे लिए अपने म्यान पर मुनीम जी की छोड़ता हूँ।”

बुद्धू ने कुछ घौर कर मुनीम जी की ओर देखा। मुनीम जी भी कुछ पबरा से गये।

मेठ जी—“जो बेतन इन्हें जद दिया जाता है, वह नईब दिने जाता—चाहे वे कान करें या न करें। जब कोई बड़ा कान करना जो तुम्हारा समझ हुआ न हो तो पहिले मुनीमजी से सलाह ले लेना और जैसा वह कहें वैसा ही करना।”

बुद्धू ने जैसे फाड़ फाड़ कर मुनीम जी की ओर देखते जाते थे और पिता जी की बातें सुन रहे थे। मुनीम जी बुरबुराते निर मुकामे बैठे थे।

मेठ जी कुछ देर दम लेकर बोले—“बन तुम्हारे लिए मेरी यह अजिन आज्ञा है। मुझे और किसी सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना है। तुम त्वमं समझदार हो; जो उचित समझना करना।”

मेठ जी ने फिर कुछ देर दम लिया। तत्परवात् बोले—“मुनीम जी! आपने मुझे कुछ नहीं कहना। मुझे विश्वास है कि जो ध्येश्वर आप मेरे नाम करते रहे इनके साथ भी करेंगे। कारण, आप इने सर्व्व ही पुत्रवत् समझते रहे हैं।”

मुनीम जी ने मेठ जी की बात का कोई उत्तर न दिया। मेठ जी ने मुनीमजी की ओर देखा। बुद्धू मुनीम की आँखों में आँखों की छोटी छोटी बूँदें निकल कर उनके भ्रूजों पर दो दो गोलों पर बह रही थी। जान पड़ता है मेठ जी का इन बूँदों का अर्थ अर्थ बात का उत्तर मिल

दूमरा—“आत सच्ची तो यह है कि बहने की तो तुम स्वतंत्र हो गये। पर अब भी उनसे ही परतन्त्र हो जिनसे बड़े सेठ जी के समय में थे। तुम कुछ बचुआ तो हो नहीं, जो अपना बनाया बिगड़ना न समझो।”

सीमरा—“अरे मार मुझा बड़ा चलना पुरखा है। वह चाहता है कि तुम उगली मुट्ठी में रहो; जिनका पानी गिलाये उगना ही पियो।”

पहिला—“गचमुच तुम्हारे लिए यह बड़ी सज्जा की बात है।”

इस प्रकार सबने मिल कर बुधूमल को ऐसा बंध पर बड़ाया कि उन्होंने यह ठान ली कि चाहे जो कुछ हो वरन्तु अब मुनीम जी के सामन में न रहूँगा।

दूसरे दिन बुधूमल गवरेरे मित्रों के साथ जाने की तैयारी करने लगे। मुनीम जी को जब पता लगा तो बड़े दुष्टित हुए और बुधू से बोले—“आखिर आने मेरा बड़ा न माना और जाने की तैयारी कर ही दी।”

बुधूमल एक तो स्वयं ही मुनीमजी से तय आ गये थे, दूसरे मित्रों से भी उन्हें मूर्ख भरा था। वह मुनीम जी का निम्नराज करने के लिये तैयार बैठे थे अनन्व हूटने ही बोले—“आग होने कीन है जो आगका कहना मानूँ? मैं तो केवल इसलिए कि आग पुराने है और पिना जी भी आगमें सलाह-बलाह लने के लिए बहुत गये थे आगका आदर करना है और आग बिद पर बड़ जाने है। क्या आग चाहने है कि मैं मोल्ह आने आगके ही बहने पर चढ़ूँ?”

मुनीम जी इस उत्तर से फिर नाराज न थे। वह बुधूमल के मूढ़ से—“तुम बुधू के मूढ़ में जिन उन्होंने मोह से बिलाया था, जिसे उन्होंने बिला-पड़ा का ध्याना-बला य दख दिखाया था—यह उत्तर मन पर स्वीकृत रह गया। स्वयं से था उन्त इस उत्तर की आज्ञा न थी।

बड़ा इस तक बड़ मर सलाह से बुधूमल का मूढ़ मानन रह और यह आगका यह कि आग यह इस आ गला जिसका बलाया आग से उनका

जिसे हमें बताना था। उस को कुछ सोचकर हम सब मग्न हो बैठे। — 'सोच' ।
हम सबों को समझते और सोचते हमारे का कानों को उनके गाने, लगाने से
अपना मन हटाई है। जिसे समझने में हमारा मन बल्ले से निकल आया है।
मौन। हमारे मन में ही सब कुछ है। हमारे मन में सब कुछ है।
हमारे मन में सब है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

सुदृढ़ता के इन बगल में सुधीन धी के गह-मोह आलस्य भी निहित हो गये। उनके हृदय पर बोह गयी। इस आलस्य और सुधीनता में भी हृदय पर प्रकाश डाला। उन्होंने फिर भ्रम कर धीरे से कहा—“अब यदि आपकी इच्छा होती है तो ऐसा ही होता।”

बुद्धिमान् बुद्धिमान् यो यो बुद्धिमान् यो यो बुद्धिमान् यो यो बुद्धिमान् । तन्मन्त्र—
यो यो बुद्धिमान् यो यो बुद्धिमान् यो यो बुद्धिमान् यो यो बुद्धिमान् ।

111

कृष्ण जी ने सुपुत्र को बड़ी आत्मा आता बना कर दिया। कुछ लोगों
के भी सुपुत्र आते कृष्ण जी होने के समकित्तु हैं, कृष्णजी की समझना
कि यही शीघ्र बड़ा है, उनकी बात का कुछ न मानिये। अगर अपने
मन को बड़े मोटो का मगरा मानिये। परन्तु कृष्ण जी ने इतरा उत्तर
दिया—“मेरे बेटा अपने मराने की बात कर लोके मरने के बाद भी,
उन्के घर को जाता घर समझता रहा और मरने समझता रहा। मैं
बहुत को सब बातें सब समझा था, परन्तु जब उन्के बुझने काल पास कर
गिया और बीजे तब न कदा मरने में न हृदय को स्वीकार नहीं करता
कि मैं अब बड़ा जाऊँ। और को परमाने वाला जाऊँ मेरा स्वामी था,

लोगों ने बुधू को भी बहुत सम्मानाया मुझाया कि तुम अपने दुर्घ्नवहार के लिए मुनीम जी ने क्षमा माँगी और उन्हें मना-मुनू कर राजी करो। परन्तु समझाने वालों की अपेक्षा मझाने वाले अधिक थे। अतएव बुधूमल ने इस बात पर कुछ ध्यान न दिया। उन्होंने केवल इतना किया कि मुनीम जी की पैरान के तौर पर कुछ मासिक देना चाहा परन्तु मुनीम जी ने एक पैसा तक सेना स्वीकार न किया। उन्होंने कह दिया—“मैं कभी बुधूमल का मोकर नहीं रहा। जिसका मोकर था उसका था। मैं बुधूमल का पैसा भी नहीं ले सकता।”

इस प्रकार बुधूमल पर जो खोश बहुत मनुष्य था वह भी दूर हो गया। स्वभाव होने से विष्णुमित्रिय बुधू के लक्ष्य बड़ गये। उन्होंने अपने कारोबार पर भी उचित ध्यान देना छोड़ दिया। सब काम प्रायः नीचों ही के बरोमे पर होने लगा। मान-डेड़ मान इसी प्रकार काम चला। उनके कारबार की इमारत बहुत बड़ी थी और नीच बचसोर हो गई थी। समय के बल में उनका-कर करके स्थिति का रस बदल दिया। बुधूमल की सागरबाही बल में वह दिन लेही आई जिसमें सेंट उगामल का फर्म उगमगाने लगा। दो लाख की एक हुन्डी का मुगलान था। बुधूमल को उसका स्मरण ही न था और न उसके नीचों और मुनीमों ने ही उस पर कुछ ध्यान दिया। दिन समय आदमी हुन्डी लेकर दुबान पर आया और मुगलान माँगी उस समय बुधूमल की जर्नि लुगी। उस समय उनके पास केवल पचास हजार रुपये पैसा थे। इसमें मन्देह मरी कि यदि उन्हें वहिले मुगलान का ध्यान होता तो दो लाख क्या बच-सु लाख का मुगलान भी दिया जा सकता था। परन्तु दो बार दिन वहिले क्या बुधूमल को एक बड़ा वहिले तब भी उसका ध्यान न आया। अब यदि मुगलान मुगल नहीं दिया जाता तो फर्म दिया-जिन्ना हुन्ना जल्दा है। वह एक महीने की त्रिमम बुधूमल जैने सागरबाहू था जो ६ दहा 'दहा दहा'। उनका जन्म पैर पर गये जिनका लक्ष्य अंधेरा

मटस्मल बोले—“भई, जरा उंगलियाँ मीची कर लूँ तो देखूँ। जाड़े के मारे उंगलियाँ मीची ही नहीं होती।”

कुछ देर बाद दहकती हुई अंगोठी मटस्मल के सामने आई। मटस्मल कुछ देर तक उसमें हाथ सँकने के बाद बोले—“हाँ! भई अब लाओ हुण्डी देखूँ। बुझाये में पत्थर की दुंदूचा हो जाती है। मेरे तो हाथ भी अब कापने लगे।”

यह कह कर उन्होंने हुण्डी हाथ में ले ली। उस आँखों के सामने लाये, हाथों के ठीक नीचे अंगोठी थी। अकस्मात् हाथ धर्राये, और हुण्डी हाथ में छूट अंगोठी में जा गिरी। जब तक लोगो का ध्यान उमड़ी ओर जाय-वाय तब तक वह जल कर राख हो गई।

भुगतान मगिने वाले के चेहरे का रस उड़ गया। इधर चुन्मल का चेहरा मारे प्रसन्नता के खिल उठा।

मटस्मल किसी के बोलने के पहिले ही बोस उठे—“क्या कहूँ, हाथ ऐसे कापे कि हुण्डी संभली ही नहीं। खैर, कोई चिन्ता नहीं। (भुगतान लेने वाले से) तुम हुण्डी की नकल लाओ और भुगतान ले जाओ। अभी ले आओ, अभी भुगतान मिल जाय।”

भुगतान लेने वाला जल-भुज कर बोला—“नकल क्या मेरे पास घरी है।। जब मंगाई आययी तब आययी। नकल बेगाने में तीन चार दिन लग जायेंगे।”

मटस्मल—“तो भाई मैं इसे क्या करूँ। समय की बात है, हाथ काप गया। बुद्धि आइयी टहरी। परन्तु इसने क्या, तुम्हारा भुगतान तो रद्द ही न जायगा।”

भुगतान लेने वाला बोला—“भुगतान भला क्या रहेगा, पर तीन चार दिन का भ्रमेला तो लग गया।”

मटस्मल—“अब तो क्या हो गया, क्या किया जाय ?”

शरणागत

श्री वृन्दावन ज्ञान बरमाँ

रज्जब अपना सोंवगार करके ललितपुर छोड़ रहा था। साथ में स्त्री थी, और गाँव में बो-सीम सौ की बड़ी रकम। मार्ग बोहुक था और मुनसान। ललितपुर काफी दूर था, वसेरा कही न कही लेना ही था इसलिए उसने मड़पुरा-नामक गाँव में ठहर जाने का निश्चय किया। उसकी पत्नी को बुझार हो आया था। रकम पास में थी और बैलगाड़ी किराये पर करने में सब जयादा पड़ता, इसलिए रज्जब ने उस रात आराम कर लेना ही ठीक समझा।

परन्तु ठहरता नहीं। आज टिपाने से काम नहीं चल सकता था। उसकी पत्नी नाक और कानों में चाँदी की श्रालियाँ डाले थी, और पैजामा पहने थी। वह उस गाँव के बहुत से नम्रोग्य और अकर्मण्य कोर लारीद कर आ चुका था।

अपने व्यवहारों में उसने गति-भर बर्बरक व्यवस्था की दाखला दी किन्तु किसी ने भी ध्यान न किया। उन लोगों ने अपने धर्म शब्दों की शक्ति तथा शक्ति के बल में। उन्होंने मेरे मुँह से यह शब्द नहीं निकाले कि मैंने इस विषय में कुछ नहीं किया।

[illegible][illegible]

इसके बाद दिन भर के घरे हुए परिवर्तनों को देखे। राखी रात गये हुए लोगों ने एक बड़े इलाके में टाकुर हो जाकर बसाया। एक पट्टी की लम्बाई छोटे टाकुर बाहर निकल आया।

जागलुरो में न एक न धार में रहा—'दाऊ ज' धाव की लाठी रख नीचे है।' कल मज्जा का सगुन देता है।

टाकुर ने कहा—'आव जम्हरा पो। पेंर, कल देता जायगा। क्या राई उताव दिया जा।'

हाँ—'जागलुरो बोला, एक कमाई रखे की मोट बांधे दूरी और आया है। परन्तु हम लोग जरा देर में पहुँचे। यह सिद्धक गया। कल देखने जरा जल्दी।'

टाकुर ने पृष्ठा-सूचक स्वर में कहा—'कसाई का पंसा न छूनेगे।'

'क्यों?'

'भुरी कमाई है।'

'उसके रखों पर कसाई धोरे हो लिया है।'

रखा तो हमरों का ही है कसाई के हाथ में आने से रखा कसाई नहीं हुआ।'

'मेरा मन नहीं मानता यह जगह है।'

हम अपने लक्ष्य पर न उसकी शक्ति कर लगे।

ज्यादा बहाने नही हुए। 'कल न सचकर अपने माधियों को बाहर-का बाहर है।' यानि 'इस'

जाने इस

जाने इस

न

तो हलका हो गया था, परन्तु शरीर-भर में पीड़ा थी और वह एक कदम भी नहीं चल सकती थी। -

ठाकुर उसे वही ठहरा हुआ देख कर कुपित हो गया। रज्जब स बोला—“मेने सब मेहमान इकट्ठा किए हैं। गांव भर मोटी दूर में तुम लोगों को मेरी पोर में टिका हुआ देख कर तरह तरह की बकवास करेगा। तुम बाहर जाओ और इसी समय।”

रज्जब ने बहुत विनती की, किन्तु ठाकुर न माना। यद्यपि गांव उसके दरदरे को मानता था, परन्तु अव्यक्त लोकमत का दरदना उसके मन पर भी था। इसलिए रज्जब गांव के बाहर सपत्नीक एक पेड़ के नीचे जा बैठा, और हिन्दू मान को मन ही मन कोसने लगा।

उसे आशा थी कि पहर-आधी-पहर में उसकी पत्नी की तबियत इतनी स्वस्थ हो जायगी कि वह पैदल यात्रा कर सकेगी। परन्तु ऐसा न हुआ, सब उसने एक गाड़ी किराये पर कर लेने का निर्णय किया। मुद्दिकन से एक चमार काफ़ी किराया लेकर ललितपुर गाड़ी ले जाने के लिए चला हुआ। इतने में दोपहर हो गई। उसकी पत्नी को जोर का बुखार हो आया। वह आड़े के मारे दर-दर काँप रही थी। इतनी कि रज्जब की हिम्मत उभी समय ले जाने की न पड़ी। गाड़ी में अधिक हुआ मयने के भय से रज्जब ने उस समय रुक के छिप माना को स्वगित कर दिया, जब तक कि उस बेचारी की कम से कम कंघरोंपी बन्द न हो जाय।

घटे डेढ़ घटे बाद उसकी कंघरोंपी बन्द हो गई, परन्तु उबर बहुत ठंढ हो गया। रज्जब ने अपनी पत्नी का गाड़ी में डाल दिया और गाड़ीवान को आदेश करने का कहा।

लोकमत बोला—“इस तरह ही उता रगा दिया। अब बल्दी चलने में लग रहा है।

रज्जब ने आश्चर्य से कहा—“मन हीन बन्दा चलने का कहा।

“कैसे माँग उठूँगा ? किसान से चुका हूँ । अब फिर कैसे माँगूँगा ?”

“जैसे आज गाँव में हठ करके माँगा था । बेटा ! तल्लिठपुर होना तो बतला देता ।”

“क्या बतला देते ? क्या मेतमेंत गाड़ी में बँटना चाहते थे ?”

“क्या वे । क्या रुपया देकर भी सेंटमेंट का बँटना कहता है ? जानअ है मेरा नाम रज्जव है । अगर बीच में गड़बड़ करेगा तो साले को यहाँ हूँ मैं काट कर कहीं फेंक दूँगा और गाड़ी लेकर तल्लिठपुर चल दूँगा ।”

रज्जव बोध को प्रकट नहीं करना चाहता था । परन्तु सामद अकारण ही वह भली-भाँति प्रकट हो गया ।

गाड़ीवान ने इधर-उधर देखा । अँधरा हो गया था । चारों ओर सुनसान था । आसपास भारी खड़ी धी, ऐसा जान पड़ता था कहीं से कोई निकला, और अब निकला । रज्जव की बात सुन कर उसको हँसी काँ गई । ऐसा जान पड़ा मानो पमलियो को उसकी ठीसी छुरी छू रही हो ।

गाड़ीवान थुपचाप बैलों को हाँकने लगा, उसने सोचा—“गाँव के आते ही गाड़ी छोड़ कर नीचे छाँटा हो जाऊँगा, और हल्ला गुस्सा करके गाँव वालों की मदद से अपना पीछा रज्जव से धुँड़ाऊँगा । रुपये ऐसे भले ही वापस कर दूँगा, और आगे न जाऊँगा । कहीं सचमुच मार्ग में मार डाले !”

[५]

गाड़ी पोड़ी दूर और आगे चली होगी कि बैल ठिठक कर खड़े हो गये । रज्जव सामने नहीं देख रहा था । जरा कड़क कर गाड़ीवान से बोला—“क्यों वे बदमाश ! सो गया क्या ?”

अधिक कड़क के साथ सामने रास्त पर खड़ी हुई एक टुकड़ी में से किसी के कटोर कठ से निकला—‘सबरसार, जो आग बढ़ा ।’

ଉପନୀତ ବାସୀ । ବାସୀ—‘ହେଉଛି ଗାମୁଛା ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

୧୫ ଶାଢ଼ୀ ! ବାସୀ ଗାମୁଛା ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

ଉପନୀତ ବାସୀ—‘ହେଉଛି ଶାଢ଼ୀ ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

ଉପନୀତ ବାସୀ—‘ହେଉଛି ଶାଢ଼ୀ ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

ଉପନୀତ ବାସୀ—‘ହେଉଛି ଶାଢ଼ୀ ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

ଉପନୀତ ବାସୀ—‘ହେଉଛି ଶାଢ଼ୀ ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

ଉପନୀତ ବାସୀ—‘ହେଉଛି ଶାଢ଼ୀ ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

ଉପନୀତ ବାସୀ—‘ହେଉଛି ଶାଢ଼ୀ ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

ଉପନୀତ ବାସୀ—‘ହେଉଛି ଶାଢ଼ୀ ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

ଉପନୀତ ବାସୀ—‘ହେଉଛି ଶାଢ଼ୀ ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

ଉପନୀତ ବାସୀ—‘ହେଉଛି ଶାଢ଼ୀ ବଜ୍ରାମୁଦ୍ର କରା ଶାଢ଼ୀ !

उत्साह में आने इकलौते बेटे को लिखा पड़ाकर अपनी भावना का मुक्त पारा दिखाओं में फैलाने के लिए बाहर—बर्बई भेज दिया था। पुत्र उस वही आया थी। ब्राह्मण के सुद्ध संस्कार उसको जन्म से मिले थे। बर और मूर्ति उसके रात दिन के साथी बन गये थे। उसमें बुद्धि थी, उत्साह था। बागाह-स्वभाव लेकर अधमता को पट्टेची हुई पृथ्वी का उद्धार करने की धार्मिक थी, ऐसा उसका पिता मानता था।

पिता ने उस दिग्विजय करने के लिए भेजा था। पहुँचे तो उस विजय-रत्न के हँके की दमत्माहट डाक के द्वारा उस तक पहुँचनी और उसे वापस लाया जाता। उसका हृदय प्रफुल्ल होता और उसे ऐसा लगा कि मन ही जाता कभीभूत ज्ञान का समय अवस्य निरुद्ध था रहा है।

धर्म का उद्धार और भार्ये सम्पत्ति का पुनः स्थापन, और वस्तुस्थिति समाप्त और सृष्टि तथा लक्ष्मी ब्राह्मण की धेड़ना, गरल और मद्यपायी समाप्त और धर्मात्मा तथा त्यागी राजा—ये वस्तुस्थिति निद्रि के तट पर दग में बगीची जाती दिखायी पड़ी। वह मान्य ब्राह्मण राजा मानस में निधी जाती हुई ब्याख्या को स्नेह में स्वीकार करने के लिए आकाशगुरु हृदय से लला था।

वस्तु बाहर ही दिना में आकाशगुरु पुनः का समाचार आता ही बर ही गया। वस्तु के प्रभावकारी आकाश की धार्मिक उसके निर्मल हृदय में दम का महाजन हो जाता, वस्तु 'महिमाधर्षि' धर्माधि सन्ध्यावाज-मन्त्रमा' का कृत्र पड़कर वह हृदय को आकाशगुरु देता।

यह कदा नर वस्तु, निद्रि की बाध की कोई मन्द गहर उस अविश्वनी के बाध में आगे वस्तु मन्त्रमा धर्म में उसका धर्म थी, भारत के धर्म में उसका 'मन्त्रमा' का आगे के उत्साह और साहस पर उड़ भगता था। जाने मन प्रसन्न हो जाता था। वस्तुमन्त्रमा उत्साह के प्रभाव में उसका

उमने गोविन्दराम अग्निहोत्री के विषय में पाँच गाँठ आदमियों में
पूछनीछ थी और अन्त में फटा चल गया । किमी ने कोठरी दिसला दी ।
जिम पुत्र को वह धर्म पुरुषधर मानना था उसका यह निवास ? एक ओर
गोपालियों की पन्क्ति थी, दूसरी ओर कोई खड़ा खड़ा मामने दर्पण टंग
कर हवायन कर रहा था ।

अनिश्चित स्वर में उस हवायन करनेवाले से पूछा—“गोविन्दराम
अग्निहोत्री कहाँ रहता है ?” हवायन करनेवाले ने मुँह जिश्काकर नि-
स्कार के स्वर में ही पूछा—“क्यों क्या काम है ?”

‘मुझे विदना है ।’—उमके सम्प्रेषन से लीभकर कुछ बुझता ने अग्नि-
होत्री जी ने कहा ।

‘उम छोकरे मे पूछो’—बढ़कर बढ़हवायन करने लगा । अग्निहोत्री ने
बमरे में बँटे एक ६-७ कर्ष के लहके की ओर देखा । लहका धरती पर बँटा
था उसका मामने एक भाव का प्याला था और उसके हाथों में न था मगमन
न थी राटी किन्तु गेहूँ की कुछ जाली-जालीदार-मी चीज थी । स्टेपनों पर
अग्निहोत्री जी ने मुसलमानों का यह पदार्थ बेचने देखा था इसलिए उन बस्तु
को पहिचान गये । मरना उमको भाव में डूबी-डूबीकर छा रहा था ।
लहके के मुँह में मेल की तरह जमी थी और उसकी आँखों में कीचड़ था ।

लहके में घाती घुरी पर घँसी-कुपेंटी घाँगी पहिने एक लंबी बँटी बँटी
बाज बाइ रही थी । इनको देखने के बाद अग्निहोत्री को सघब न रहा ।
गाँठ धर्म पढ़न जिम बायाँप बग्या के भाव लहके का प्याह किया था वहीं
गुमार कर रही थी । भागी हृदय से उमने उमने पूछा—‘गोविन्दराम
कहाँ है ?’

‘कहाँ है ?’—दूसरा गाँव की जगहदरका बग्या वहाँ पढ़के देखें हुए
ममर की बँस पहिचान । ‘गोविन्दराम बाइर गया ।’ क्या काम है ?’
—उमर हुआ ।

वासन माँझनेवाली माँझि मे वासन माँझ रही थी और नल बन्द हो जाने के कारण जूटे हाथ से उस बड़े बर्तन में से पानी ले रही थी। एक एक पल्ले पल्ले भी वह पानी उछाल रहे थे।

अग्निहोत्री की विचार करने की गति रुक गयी। वह बापिम आया और इन्वात्रे पर धन भर गया रहा—और विचार करने लगा—यह माँझिदरम अग्निहोत्री का घर ? और यहाँ का यह आचार ? वह वह कैसे महन करे और इसमें किन प्रकार रहे ? क्या करे ? इनमें मे उसका ध्यान घर की आर गया। बून्हे घर की दाल उछलाई, वह स्त्री उठी और बेसी की बेसी—न हाथ धोया, न मोने की धोती पहिनी और बून्हे के पास जाकर दाल उतार आयी। यह देखकर अग्निहोत्री जो की दुविधा दूर हो गयी। उन्होंने पगड़ी गिर पर रखकर पोटरी हाथ में ली। यह अघोपति दलकर इनका गिर घूमने लगा।

'म बाहर हो जाऊँ, फिर आऊँगा। कहकर वह चल पड़े। अग्निहोत्री वहीं से बाहर निकला। उसकी सीधे अग्निो का क्षेत्र खिन्त हो गया। उसकी देख का बल जाता रहा। उसे समझ न रहा कि मैं स्वयं किस समार में हूँ। उस समझ न पड़ा कि ऐसा समार मैं में किसलिए आया। किसी से मार्ग पूछकर उसने समुद्र की ओर चलना प्रारम्भ किया।

वागर देखकर उसके मन की माँझना हुई और स्नान-गंध्या करके बहुस्वस्थ हुआ। जो स्त्री और लड़का वह देखकर आया या वे क्या वचन हुए माँझिदरम के थे ? इसे मान लेने के अनिश्चित कोई मार्ग न था। यदुशकर उसने पागे ओर देखा। सामने बोड़ी दूर पर जाकर के मन्दिर के समनपूज्यो निम्न पर से समया प्यरा उसको आर्पन्विन कर रहा था। उनके हाथ की कुछ अतिशयन मिला।

अन्य से अलग-अलग इच्छा की मज्जाया के अलग हीट भी नहीं। बीरे अनेक वर हाथ समार के अन्दर में लगे और उनमें गहर की गुरा की।

'नहीं',—स्त्री ने कहा—'मुझे तो वही कुछ अच्छा नहीं लगता ।'

'तु इतने कबे बबई म रही, परन्तु मुचरी नहीं, बल-बल ।'—कहकर
मोक्षानन्दराम आसन्न पुनःक उसको ईरानी की दुकान में घसीट ले गया ।

अभिहासी की आँखा में कुछ विचित्र प्रकार का तेज समा गया ।
अन्धकार में भी वे चमकन लगी । उस दुकान में से दो मिर्ची भाई विस्म-
भोर परचरकाने हुए चले गये । अभिहासी ने निश्चय छोटा और शिवा-
लय की ओर बालन मुड़ गया । उसको लगा कि मूर्च्छित चलकर राक्ष हो
गरी है । तेजस्विनी में उठकर आये हुए जब वहाँ पहुँचे । मन्दिर की
अध्यक्षा उसे दमशान में भी चीभल्य लगी । उसने मन्दिर के गर्भ द्वार पर
जाकर गङ्गा का प्रणाम किया, परन्तु चकर कुछ इविम-मे उँव । आम-
पाव की विष्णु का प्रकाश अन्धकार में भी अधिक कष्टकर लगा । पुत्राग
बालन वी देवकन रागते लड़े हुए गये । एक कोने में हाथ बाँधकर
बहु खड़ा रहा । पास ही का अग्रमण बड़े बाने कर गृह ।

'बाई, कुछ कुछ के वही नकलगी है, जानता है ?'

है ।'—दुख ने कहा—'यह नाम

'स्वा

नर रही मुनक है ।

इस कवि जगत में 'नन्दन' १११ ११ ११ ११

'व' ११ ११ ११ ११ ११ ११ ११

१ १ १ १

१

१ १ १ १ १ १ १ १

१ १ १ १ १ १ १ १

रही गयी कम्बुने उठा। वह समुद्र में जाने बहना गया, मूर्ति-विग्रह पर निदरा
 गया। वह बगलावा जोर मूर्ति के बाया — 'नत्तास्तिनुपरेण्यं।' लड़
 उमड़ मूर्ति तक आ गयी, आर चढ़ी। अग्न तक पहुँची। यह स्थिर नेत्रों से
 बाँध रहा। जीव कम्बु हो गयी। गिरा अमुक हो गयी। उसके गिर प
 गयी बहने गया।

उस मायावी वाता न अटक गये देने। उसी जीवों के नाम
 मूर्ति शिव वापस रहा। उमड़ माया के इमान दिव। काल में हरे
 बाया, कोई हीन उमान हूँ कह रहा था—

'यदा यदा हि धर्मस्य क्लान्तमवति भावः ।

अनृतकानमपमंशुः सदात्मानं मुनाम्यहम् ॥'

मान 'नत्तास्तिनुपरेण्यं' बाया आर विवा, वगलु मूर्ति विग्रह पू
 गया, बाव बन्द हो गया और गया गिराई में कम्बुकार हो गया। जीव
 हाथ की कटुता से मूर्ति हो गई।

लेता । कुछ लोग उसे पागल कहते, कुछ उनकी समझते और कुछ लोग उसे महापुरुष मानकर उसमें श्रद्धा रखते ।

मद्रासी होने के नाते वह रंग में मुझसे सवाया था और मेरे ही समान उसको भी यह धारणा थी कि राम और कृष्ण हमारे ही रंग के हो रहे होंगे । किन्तु श्रीकृष्ण जो से उसे एक ही बात की चिड़ थी कि राम की समानता होते हुए भी उन्हें तो सोलह महत्त्व रागिनी मिली और पिल्ले को एक चिट्ठी की रानी भी न मिल पायी ।

रंग की महापुनरुत्थानता होने पर भी वह अपने को कामदेव ने कम नहीं समझता था । यद्यपि मर्कट होने के नाते मेरा वह धर्म तो नहीं है कि मैं पिल्ले का नाव-सिल्ल धर्मेन बचूँ किन्तु क्याकार के धर्म की रक्षा के लिए आवश्यक समझकर इतना ही कह देता हूँ कि जब वह अपने काले मुग्ध शरीर पर अघबहियाँ कमीज पहिन कर, लूंगी बांधकर, पेगावरी बण्डल पैरो में डालकर और माथे पर लाल टीका देकर निकलता था तब ऐसा लगता था मानो मध्यप्रदेश के जंगल से पकड़े हुए किसी काले भालू की उमले कपड़े पहना कर उसके माथे पर लाल पकड़ी हुई भाङ्गुरी टीक की हो । किन्तु पिल्ले उस समय अपने मन में यही समझता था मानो नगर की सभी कुमारियाँ हाथों में बरमाला लेकर अपने अपने द्वार पर उत्सुकता के साथ मेरा वरण करने के लिए खड़ी हो । वह फाट्टे की हिन्दी बोलता था और यदि उसका रंग और नाम ही उसका भेद न खोल देते तो कोई सपने में भी नहीं समझ सकता था कि पिल्ले जो चिच्छिन्ना से बने था वह है ।

पिल्ले ने कायम हिन्दू नाम 'अनुराग' स्वयमवक मध, मनाववादी दत्त कम्पनिस्ट पार्टी जगत मध, मन्वाजा ॥ बाने-बाग म नाम दिवाकर कभी दादा बहादुर कभी बालू बहादुर कभी मरु, 'कम' कभी नायिका और अन्त में म अज्ञान का उन्हा उसकी गपस्या

निरीह पिल्ले ! मेरी तुम्हारे साथ बड़ी सहानुभूति है । जिस देश में दहेज का द्रव्य घर में न होने के कारण लाखों कन्याएँ कुमारी रहकर बुढ़ारा तक काट देती हैं, जहाँ अपने विवाह की चिन्ता में घुलने हुए माता-पिता की मनोव्यथा को सहन करने वाली संकटों कन्याएँ यम को वरण करने के लिए विवश होती हैं उसी देश में ऐसा एक भी पिता नहीं जो अपनी कन्या लाकर तुम्हें दे सके, ऐसी एक भी कन्या नहीं जो यम के वरने तुम्हारे गले में वर माला डाल दे ? काला रंग ही वायक हो ऐसी भी बाल नहीं है क्योंकि पिल्ले के रंग से भी अधिक गहरे रंग वाले, पिल्ले से भी अधिक विकृत रूप वाले और पिल्ले से भी बड़ी अधिक उन्नत, मार्म, देहाती आराम इस इस बच्चों के साथ बन बैठे हैं । उन्हें भी तो कहीं पानी मिली होगी न ? पर न जाने पिल्ले ने ही बह्म की दासी का ऐसा कौन-सा बाल गोब लिया था कि उसी के माथे से पानी मिलने वाली रेखा उस चौमुँह में स्पष्ट मिटायी ।

थोड़े दिनों में वह मुझे मिला नहीं था । मैंने समझ लिया था कि या तो उसकी साँठ-गाँठ बँठ गयी होगी या वह वही बाहर चल दिया होगा । रमते जोमी का टिकाना ही क्या ? दो चार दिन तो मैंने पूछताछ भी की फिर मैं अपने काम में लिपट गया । मैंने पिल्ले को भुलना प्रारम्भ कर दिया ।

सयोगवश मुझे बम्बई चला जाना पड़ा, इसीसे पिल्ले और उसकी स्मृति दोनों मुझसे दूर हो गयी ।

पिछली दीवाली के दिन मैं अपने एक मित्र से मिलने छान्दानूर चला गया था । वही बात-बान में उसने पिल्ले की चर्चा छोड़ी और बहने लया कि वह आजकल बम्बई में एक हिन्दुस्थानी परिवार के साथ रहता है । बम्बई में गुजराती, मराठी, गोवानी, मद्रासी, सिन्धी, मारवाड़ी, पारसी, सिख, ब्राह्मण, खोजा, मुसलमान आदि अनेक भेदों में हिन्दुस्थानी भी एक भेद है जिसका अर्थ है मुसलमान का रहनेवाला । मुझे बड़ी उत्सुकता हुई

मेरी श्रद्धा और भी गहरी हो गयी। मैंने श्रद्धा-विह्वल होकर कहा—
'भल न जाना हमें।'

अपनी पत्नी को भी मैंने समाचार सुनाया। जिसे पट्टे मुँह भी गिन्न
नहीं आता था वही पिन्ने की इस महत्ता में प्रभावित होकर उसके लिए
चार लहसू ले आयी—'मुँह मोटा कर लो।'

जिस दिन वह दिल्ली के लिए चला उस दिन मैं भी फल माला लेकर
उसे बिदा देने चोरी चन्द्र तक गया था और मेरी पत्नी भी हठ करके
मेरे साथ गयी थी।

बर्गवादी दल के अनेक युवक युक्तियों का समूह वहाँ पहुँचा हुआ था।
द्वितीय धेंगी के इन्चो में तीन स्थान घिरे हुए थे, एक पर महादेवी जी, दूसरे
पर शारदा जी, तीसरे पर स्वयं पिन्ने। शारदा जी, और उनकी माना जी
दोनों उन्ने दिल्ली तक पहुँचाने जा रही थी, उनका घर भी—मेट भी—
उधर ही था। बड़े भूमधाम में बिदाई दी गयी, सबने फूल मालाएँ पहनायीं।
मेरी पत्नी ने अपने हाथ में फूल माला उसे पहनाई और 'कहा-सुना नाक
वरना' का परिचित मूत्र पड़ कर पिन्ने और शारदा से मुलमुल कर भाते
की ओर अन्त में जब पिन्ने ने कमकम मुँहे छाती से लगा लिया तब तो
मे फूल न समाया, मानो स्नाटिन ने ही मुँहे गले लगा लिया हो। सबकी
दृष्टियों में मैं ऊँचा उठ गया। पिन्ने ने कहा—'सबसे पहने में तुम्हें
लिखुता।' मैं अपने मोझाम पर धौमुना फूल उछा और देखा कि सब की
ईर्ष्या दृष्टियाँ मेरी महत्ता में आबाल्ल ह।

गाड़ी ने संटी दी गाड़ी चन् पडो, ओर हम लोग अपनी महत्ता पर
नव वरन हुए लोट आय जाग मरम अधिक रस तो मुँहे नव जाया अब
... की पत्नी न कहा—उठ अचल य वचार।

उमा का आन्वर्तिक जे न कान की उन्कि रस और अनुकम्पा बहा है।

इस पत्र को पढ़कर एक बान तो यह नई बात हुई कि महारथी जो मे-
जिनने नाम मने कम्पिन बिये थे—विष्टकभोज्या, करालघोषा, द्रव्य-
बदना, नटाह-परीरा, मष्टि-मान-मदिनी, मानव हस्तिनी आदि, वे मने
निरर्थक हो गये और उनका नामकरण करने वाले पुरोहित पर बड़ा राग
आया कि यदि उस मूढ़ को केवल पात्रवाची ही नाम रखना था तो गर
कहाई, रामहृदिका, राममटकी, रामकुठला क्यों नहीं रक्खा, यह गम क्या
या दरिद्र नाम उसे मूढ़ ।

पत्र पढ़कर पीछे उसका तो उस पर पिल्ले ने लिखा था—

‘मने और शारदा जो ने कम्पुनिस्ट पार्टी मे त्याग पत्र दे दिया है ।
विवाह में अवश्य आना ।’

और उसी के नीचे महिलाई अधरो में शारदा जी ने लिखा था—

‘माभी जो को भी अवश्य लायेगा ।’

पत्र पढ़कर मैं कितना भूकलाया हूँ यह तो आप इसी बात न
ममक सकते होगे कि उस पत्र को मुरेद मुरेदकर मने तत्काल लूरी की
टोकरी में फेंक दिया । मने अपने महसूस का जो काल्पनिक प्रसार उठाया
था वह इस पत्र ने क्षण भर में ध्वस्त कर दिया । जो पिल्ले अपने
अभिन्न मित्र से इतना कपट करके इतनी मजबूत छिपा सकता है, शारदा
जैसी अरुण कन्या मे विवाह करने के लिए इतना कपट बाध सकता है वह न
तो पागल हो सकता है, न सनकी । और महापुरुष ? छि, वह महापुरुष
की पग धूलि भी नहीं हो सकता और मैं पिल्ले के उस प्रवचनावूर्ण रूप पर
गंभीरता से विचार करने लगा जब उसने मन्त्र पर अपनी महता का आश्रक
जमाने हुए अव्यय कहा था— मैं कम जा रहा हूँ ।’

छोड़ दिया था। पलटूराय ने विज्ञान नहीं पढ़ा और न किसी प्रयोगशाला में प्रयोग किया, किन्तु ठर्रा और जल का मिश्रण इस चतुराई से करते थे कि मसाम नयूरी की स्वर्गना आत्मा भी हर्षान्तिरेक से विह्वल हो उठती और उनकी मधुशाला के सदस्यों को तो इसका कभी मन्देह भी नहीं होता। पलटूराय साहित्य के उस सिद्धान्त के अच्छे ज्ञाता थे जिसके अनुसार कला का ठिपा लेना ही सच्ची कला है।

वह हिमाच जोड़ना न जानते हो, किन्तु घन जोड़ना जानते थे, वह साहित्य न जानते थे, किन्तु साहित्यकारों को जानते थे। उनमें प्रतिभा न थी, किन्तु प्रतिभा उनके पास एकत्र हो जाती थी। द्रव्य-वस्तु के व्यापार से द्रव्य बढ़ता है, ऐसा जान पड़ता है। उनके पास भी रुपये उही गति से बढ़ने लगे जैसे ज्वर में प्यास बढ़ती है। इसी बीच यूरोप में लड़ाई छिड़ गयी। व्यापार के अनेक नाचन रिसावों पड़े, मानो अलौकिक के स्रोत का डार लुप्त। पलटूराय ने एक लपाया और बार पाया। कुम्हार के अर्ध की अग्नि से मिट्टी के बर्तन पक्के हो जाते हैं, समर की अग्नि में लोभों के घर कच्चे से पक्के हो गये। पलटूराय की बोधी बन गयी। उनकी संपत्ति अब उसी परिमाण में गिनी जाने लगी जिस परिमाण में रावण के पुत्र और नाती गिने जाते थे। सोस्वामी तुलसीदास ने बताया है कि किस अवस्था में किसे छोड़ देना चाहिये। पलटूराय ने अपने गये बानावरण में मधुशाला किसी और रम-येसी व्यक्ति के हाथ में मीपी और लोहे के व्यापारी बन गये। ठोस होने पर व्यापार भी तरल के टोम यस्तु का करना उन्हें डीक पड़ा। सरकारी कर्मचारियों का कृपा-कटाक्ष उड़ा और पलटूराय को लाटमन्त्र मिल गया। कहा जाता है कि मुद्रकाव में लड़ने को भी किसी व्यापार का लाटमन्त्र मिल जाता था वह लक्ष्मणी बन जाता। पलटूराय ना उठता था ना क मधुशाला बन गया। रामचन्द्र बन गये ना लड़ने के माता । म ना बन गये टाका रर राव माता ।

इस प्रकार प्रणाम किया मानो साक्षात् विष्णु भगवान को नमस्कार कर रहे हैं ।

पलटूराम ने देखा । पूछा—‘कहिये ।’

मन्गी जी बोले—‘आप का ही दर्शन करने के लिए आया हूँ ।’ पलटूराम चुप रहे । उन्होंने सोचा होया मेरे दर्शन के लिए कोई आया है तो मैं देखता हूँगा और देखता मौन रहने हूँ । थोड़ी देर दोनों व्यक्ति चुप रहे । फिर मन्गी जी बोले—‘अखिल भारतीय हिन्दुस्तानी मन्दिर का वार्षिक अधिवेशन है । सब लोगों की बड़ी इच्छा है कि आप ही उसके सभापति हों ।’

मूर्खता देवी का अपरिग्रिम प्रसाद पाने पर भी इतना तो वह मीच हो गये थे कि ऐसे अवसर पर क्या कहना चाहिये । बोले—‘इसके लिए तो कोई योग्य व्यक्ति चुनिये । मैं अपढ़ वहाँ क्या कहूँगा । हम लोग उन्हीं बानों की प्रणाम से प्रसन्न होते हैं जिन बानों की हममें कमी होती है । जब मूर्ख को कहा जाता है कि आप ब्रह्मपति के बाबा के सभापति हैं तब बड़ा प्रसन्न होता है ।’ मन्गी जी ने उन्हीं मूर्खों का सहारा लिया जो भागवत के काल में चले आ रहे हैं । बड़ा—‘वालेज और विश्वविद्यालय में पढ़कर ही कोई विद्वान् नहीं होता । आपन समान के विश्वविद्यालय में शिक्षा पायी है । और आपका तनिक भा नकेत हो तो किसी विश्वविद्यालय से डी० लिट्० दिला दूँ ।’ पलटूराम ने सोचा—‘पलटूराम डी० लिट्० कानो को बिना मधुर लग रहा है । पलटूराम बोले—‘आप लोग तो बहुत तग करते हैं । फिर यदि आप लोगों की सेवा न करूँ तब भी नहीं बनता । कश्चि बना करना होगा ।’ जैसे कई नवविवाहिता वध अपने पति से चोले रहते हैं ।

मन्गी जी ने कहा—‘क्या कुछ नहीं । जल्द चलिजगा’

पलटूराम—‘वस ।’

मन्गी जी बोले—‘... और कुछ भी नहीं ।’

मुसलमानों को मनमोद मिटाना चाहिये । हमारा प्राचीन देश अखण्ड मलमनमी के लिए प्रसिद्ध है । हमारा आदर्श बेल है जो स्वयं मृदा का अन्न है और हमारे लिए अनाज छोड़ देता है । आप मुसलमानों की मलाई कोमल, यह आपके मर्द हैं । हिन्दी और उर्दू हटाकर हिन्दुस्तानी का व्यवहार कीजिए । नही देश का मूयण होवा । आपस के प्रेम के रस में हमें पीयना चाहिये । हम एक दूसरे का मार ग्रहण करें, गले मिलकर एक दूसरे को मेटें । कलह को मोह में दे शक्तिये, स्वाधीनता का मोर आ गया है । हमें इसका स्वागत करना चाहिये । मैं मापण देने के योग्य नहीं हूँ । विशेषतः आप और विद्वानों की मोह में ।'

आपस का क्या परिणाम हुआ कहने की आवश्यकता नहीं ।

सहायता से अग्नि प्रज्वलित कर दी गयी। रक्त चन्दन, रक्त पुष्प, रक्त-वस्त्र, तथा पूजन के अन्य सभी रक्त उपकरण लाकर शृंगपाल ने पार्श्व में रख दिये। जलनी हुई अग्नि-चिंगों के रक्तमय प्रकाश में वे सब और भी ज्वलमान हो उठे। यज्ञ के लिए एक महिष लाकर मूष में बांध दिया गया तथा रक्तमय मदिरा, उड़ेल उड़ेलकर तान्त्रिक पीने लगा।

पर्याप्त मात्रा में मदिरा पी चुकने पर जब उसके लोचन ही नहीं कपोल और चिबुक भी महारण हो उठे, तब उसी आत्रा पाकर शृंगपाल एक तर-कट्टाल ले आया। स्थाप्य चर्म के ऊपर उन कट्टाल को एक तर-कट्टाल ने अपना आसन बनाया और उसी पर वह बैठ गया। नरमुष् के अस्थि पाशों में रखे हुए पूजन के रक्त उपकरण कुम्हारखनी के निशोष में घोर भीषणता की मूर्ष्टि करने लगे।

मदोन्मत्त तान्त्रिक महासुख से उठा। एक हाथ में उमने क्षप्पर लिया और दूसरे हाथ में तीक्ष्ण खड्ग। मूष बड़ा महिष के पास पहुँच कर अपने सधे हुए आघात द्वारा महिष की गर्दन काट दी। पृथ्वी पर छटक कर बिजाल शृंगी वाला मत्स्यक तलकलाने लगा और घरीर छटपटाता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा। बहती हुई रक्त की धारा पहले तो क्षप्पर में गिरकर तान्त्रिक ने महाकाली के चरणों पर चढ़ायी और फिर घीमता के साथ अनेक बार क्षप्परों को भर भर करके स्वयं स्नान किया। एक क्षप्पर में जमते हुए रक्त को भरकर उसने हवनकुण्ड के पास रख दिया। उस अमा की निस्तम्भ रात्रि में झोपित-निष्ठ तान्त्रिक की भीषण माहृषि देवपर नित्य का अभ्यस्त शृंगपाल भी काँप उठा। मन्दिर के आग्नेय कोण में बैठी हुई तान्त्रिक की शिष्या वयामनामी भी भय से त्रस्त हो गयी।

तान्त्रिक ने रक्त चर्म के उपकरणों में महाकाली की पूजा की और लोमत्रग्धि-पुनः मर्त्यि-याम नकर हवन करने लगा। पेशाचिफ मन्थ ॥ नमस्ते मन्दिर भर उठा किन्तु न मान उस की भीति हवन करने

पुत्र थाया । जहाँ सब समाचार सुनकर वह स्तब्ध हो गया । गुरु ने उसने आकर मार्गो घटना कह सुनायी ।

उमने कहा—‘वत्स !’ उस काम्बोरी विदुषी को समोहन विद्या की मित्रि प्राप्त है । उसकी तान्त्रिक शक्ति के सम्मुख तुम कुठ न कर सकोगे । अतः प्रतिशोध का विचार त्याग दो ।’

पर भैरवदत्त का अन्तःकरण अन्याय, अपमान और प्राप्त प्रत्यापना के उन्माद में दग्ध हो रहा था । उमने अपने जीवन का लक्ष्य बनाया उन्हीं दोनों व्यक्तियों की अपमानित करना, उनके जीवन की मूल-शान्ति बिगड़ करना और पाटलिपुत्र के सम्मानित पद से उन्हें नीचे गिराना ।

तान्त्रिक मित्रि प्राप्त कर प्रतिशोध देने की कामना से वह कामरूप के कामाक्षा मन्दिर में जा पहुँचा ।

कामाक्षिक भीषणानन्द की पाँच बरों तक अनवरत और भक्तिपूर्ण परिचर्या करने के अनन्तर उसने मारण, उन्मादन और कीलन की सिद्धि प्राप्त की । अन्त में अपने हृदय का आराध आचार्य भीषणानन्द ने स्वीकार किया । आचार्य ने महाकावी स्वामी का अनुष्ठान करने की अनुमति दी और यह भी कहा कि दोसावती की रात्रि में पाँच बरों तक इस अनुष्ठान का वार्षिक आयोजन करना पड़ेगा, जिसमें शनिवार व्रतार विहान, वैश, उष्ट्र, महिष और मर के सोषात्मिक युक्त मांस की बलि देनी पड़ेगी । वर्ष भर की उपासना को अवनता होगा और भीषण परिस्त्वष्टियाँ का मरना होगा । अन्तमें उन्होंने कहा—‘वत्स भैरवदत्त, आज मे मुझे से अनी विषय दीक्षित करना है, परन्तु मैं चाहता हूँ कि इन प्रयोगों की साधना के स्थान पर तुम अविमर्दि मित्रि प्राप्त करने का प्रयत्न करो ।’

पर प्रतिशोध की भावना से विकृत भैरवदत्त की कुछ प्रवृत्ति न मरती । वह करने पर आचार्य ने महादेवी स्वामी की एक-वार्षिक अनुष्ठान विधि दिखाने के साथ स्वयं और निष्कण्टक-सामन्त का उपासक में बनाने का प्रयत्न किया ।

शे शे

मुन्नी कमलिनी मेहता

‘टन, टन, टन ...’

मध्य रात्रि की घोर निस्तम्बता घण्टे की गम्भीर ध्वनि से काँप उठी—मेरी भी निद्रा भग्न हो गयी। मैं दिन भर की यात्रा से थक कर रही, घण्टेपर की चबूतरों पर सो गयी थी। उस सप्ताही रात में घण्टे की ध्वनि बड़ी ही भयावनी लग रही थी। तबसे उसका कर्णभेदी नाद बन्द हो गया और उसका स्थान एक धीमी कराह ‘छे छे’ ने ले लिया। वह कराह इतनी दबे भरी थी कि मैं चोकर पसी, अनायास मेरे मुख से निकल पड़ा—‘यह कौन ‘छे छे’ की ध्वनि कर रहा है?’

‘यह मेरी ध्वनि है।’—मैं और अधिक शक्ति तथा स्तम्भित हो उठी। आँखें फाड़-फाड़ कर अवकाश में हथर उधर घूमने लगी पर कोई भी दिखायी न पड़ा। मेरा हृदय बस से काँप उठा, फिर भी मैंने साहस बढ़ाकर प्रश्न किया।

‘तुम कौन हो, कहाँ हो?’

‘मैं तुम्हारे भिर के ऊपर हूँ, पील देस का विशाल घण्टा हूँ।’

‘क्या कहा घण्टा? अद्भुत! तुमने मानवीयाणी कहाँ से पायी?’

‘समर में कभी-कभी ऐसी भी घटनाएँ हो जाती हैं जिन्हें देस कर मनुष्य अवगम्य में पड़ जाता है। क्या तुमने कभी यह भी सुना है कि किशो घण्टे का निर्माण करने में पिता को अपनी पुत्री का बलिदान करना पड़ा हो।’

‘अर्थात्?’

‘अर्थात् यही कि मृदु मार्च में राज्य के समय धानु के साथ धनु-विज्ञान कुशल कुशील को सुन्दरी कन्या का रक्त भी मिलाया गया।’

निर्जन बेला में उस चिर परिचिन मार्ग पर किसी को देख कर उसे चौंका हुआ । क्षण भर में वह वहीं जा पहुँची, किन्तु दोनों में से किसी ने उस नहीं देखा । उसने मुना पथिक कह रहे थे—‘मारिपुत्र गुप्तचर है, उन्हें मृत्यु-दण्ड मिलेगा ।’ वे जा रहे थे उसी जोर, उन्हें बन्दी करने । बालिका अधिक न रुक सकी । उस ध्वनि ने उसकी सम्पूर्ण चेतना नष्ट कर दी । उसे प्रतीत हुआ मानो हिमकिरीट धारण किए हुए विश्व सम्राट भी मारिपुत्र की मृत्यु घोषणा कर रहे हो । उसके मुख का स्वाभाविक उल्लास न जाने कहाँ विलीन हो गया, उसका शरीर अवसन्न हो चला और जाने बढ़ने की शक्ति उसमें न रही । उसे प्रतीत हुआ मानो मेरा सम्पूर्ण शरीर निर्जीव हो गया है ।

‘मानव मेरा का द्रव्य धारण करने वाले मारिपुत्र गुप्तचर हैं ।’ यह कह कर वह भावना उसके मस्तिष्क को मगने लगी । तब क्या यह सब सोंप है, धर्म के आवरण में क्या वे राजनीतिक चाल चल रहे हैं । किन्तु उसका हृदय इसे स्वीकार नहीं कर सका । मारिपुत्र पर उसे थड़ा घी और विस्मान था कि उपागन्त के वे भक्त अमत्य बाणी नहीं बहेंगे । तब क्या होना ? वह भयभीत हो उठी । समीप ही ब्रह्मपुत्र नद हुर-हुर करता हुआ स्वयं हिमाच्छादित चट्टानों पर प्रबल वेग से आगे बढ़ रहा था । दावा का ध्यान उन पर था । उसे आज सम्पूर्ण प्रकृति निर्जीव और गून्ध प्रतीत हो रही थी । भविष्य में होने वाली सम्पूर्ण घटना उसे नेत्रों के सम्मुख स्पष्ट दिमागी से रही थी । वह देख रही थी ब्रह्मादी के बीच पिछे हुए मारिपुत्र, क्या अपने पिता की । उसका शरीर मिहर उठा ।

उसने सभी दूर पर जान हुए पथिका का अस्पष्ट बाणो—‘स्वयं उपागन्त भा उनका —’ नही पर मगन । बालिका का कुल होती हुई बनना गोट जाता । उन सब न जाता । उस समय आत्मा को यह अनुमान । न अपनी आत्मा का न मगन । उसने दृढ़ स्वर में

हुई शक्ति पुन लौट आयी और वह उठ खड़ी हुई ।

मारिपुत्र के द्वार खुले हुए थे और दोनों सैनिक अन्दर थे । डावा ने दूर से देखा और प्रसन्न हो उठी । उसे निश्चय हो गया कि मारिपुत्र इस समय घर पर नहीं है । वह बड़ी और द्वार पर जा पहुँची । सैनिकों ने दृष्टि उठा कर पूछा—‘कौन ?’

कपिन कण्ठ ने उत्तर दिया—‘घील के कारण मरीर अवसन्न होता जा रहा है । बाहर बर्षा हो रही है । केवल इस भीषण बेला में विधाय बाहरी हूँ ।’

अर्ध निशा में शीत में स्थाकुल हुई बालिका को देन कर सैनिकों को दया आ गयी ।

बालिका भीतर गयी । दोनों सैनिक मदिरा पान कर रहे थे, कुछ ही क्षण पश्चात् वे पृथ्वी पर गिर पड़े । और बेसुप हो गये । डावा ने मारिपुत्र की आवश्यक वस्तुएँ उठायी और खोरे से बाहर हो गयी । उगने द्वार कुम्हला में बन्द कर दिया और आगे बढ़ी । वह जानती थी कि रिमापुरी के मन्दिर के अनिरुद्ध मारिपुत्र और वही नहीं जा सकते ।

दूर गढ़ाड़ी पर भरती के मध्य वह सुन्दर देवालय स्थित था । वह आगे बढ़ रही थी और पर्वतीय वायु उसके शरीर को सेवे डाल रही थी । किन्तु वह प्रसन्न थी । दूर पर उमने देखा एक पवित्र शाक पर जा रहा है । डावा ने सम्पूर्ण शक्ति लगा कर उसे पुष्परा और रिमापुरी तक पहुँचा देने की याचना की । पवित्र न उसे शाक पर लाद लिया ।

X

X

X

X

सट ! सट ! सट ध्वनि अपने द्वार पर गूँककर ध्यान शून्य नशावत् के भस्म चोंक उठे । उन्होंने पूछा—‘कौन ?’

चिरपार्श्विन्त मध्व कण्ठ न उत्तर दिया—‘वे हैं ।’

निनीस वः उस भोजन तमिस्रा मे अब मध्व तिमिरादिनि शिखरी

की बाणी में सोच था । अत्यन्त वृष्ट से उन्होंने कहा—‘मैं मृत्यु से नहीं डरता बल्कि तुम दोनों की विनति में डालकर मेरी आत्मा अत्यधिक रूप से प्रयाण करेगी ।’

‘किन्तु मैं आपको बचाऊँगी । तबामल मेरी सहायता करे ।’

‘यह नहीं हो सक्ता बहन, किन्तु तुम्हें शत्रुओं को घोर आपत्ति में डालने अपने जीवन की रक्षा में नहीं करना चाहता ।’

‘अब तर्क करने का समय नहीं । राज-प्रतिनिधि के सैनिक आते हैं । चलिए, शीघ्र पिता की सूचना देकर मुक्त पहचानी मायों में मैं आरम्भ निष्कृत के बाहर पहुँचा दूँगी ।’—शीघ्रता करते हुए शबा ने कहा ।

सारिपुत्र उभी प्रकार निश्चल बैठे रहे ।

‘चलिए । इस भीषण बेला में मुक्त मायें धूमिलता सुरक्षित हों ।’

‘पिता और बहन को छोड़कर मुझे जीवित रहने की इच्छा नहीं ।’

‘नहीं, आपको चलना ही होगा’—शबा की बाणी में दृढ़ता थी ।

‘हट न करो बहन । मुझे यही रहने दो ।’

‘मेरे इन अन्तिम अनुरोध की अपेक्षा मन कीजिये, सारिपुत्र, शीघ्र चलिए ।’

भावी आपत्ति की सूचना देना आवश्यक जान सारिपुत्र शबा के साथ सामा सम्मेलन के समीप चला पड़े ।

मेघाच्छन्न पथ अन्धकार की काली चादर में ढका जा रहा था । रात्रि की लक्ष्म्यता बढ़ती जा रही थी । ब्रह्मपुत्र का भीषण रथ हृदय को कपित कर रहा था । उस अर्थ निष्ठा में दुर्गम पथों को पार कर दोनों सम्मेलन के समीप जा पहुँचे ।

सम्मेलन रात्रि पूर्वक सम्पूर्ण घटना स्मरणकर विचारमग्न हो गये । कुछ क्षण पश्चात् उन्होंने शबा की ओर मुख फेरा और उसे सारिपुत्र की मुक्त माय न निष्कृत के बाहर पहुँचा देने का आदेश देकर उठ खड़े हुए । सारिपुत्र ने

वही धूमिल सन्ध्या थी—मलिन और उदास ।

एकाएक डावा रुक गयी ।

‘अब मुझे विदा दो सारिपुत्र ।’—मन्त्र नेचो ने डावा ने कहा ।

‘डावा ..’ सारिपुत्र का कंठ अवरुद्ध हो गया । वे आगे नहीं कह सके ।

‘अब हम सौम्य तिब्बत की सीमा के बाहर हैं, वही मे आन निर्दिष्ट भारत पहुँच सकने हैं ।’—जिसी प्रकार डावा ने वाक्य गमाया किया ।

‘मैं जाने बिन कुरे क्षणों में येंने तिब्बत में प्रवेश किया कि मेरे ही काम देवगुप्त सभ्य और तुम .’ सारिपुत्र का वाक्य उनके अधुओं ने पूर्ण कर दिया ।

‘सारिपुत्र । इस घटना ने अपने हृदय का दम्य मन जीवित । कष्ट ही मनुष्य की कनोटी है ।’

दोनों मौन थे ।

कुछ क्षण पश्चात् सारिपुत्र ने कहा—‘डावा ! तुम्हारा स्नेह इसी प्रकार सर्वत्र मुझे पथ प्रदर्शित करता रहेगा ।’

कठ तक आकर डावा की वाणी रुक गयी ।

‘अब विदा दो ।’ कष्ट पूर्ण स्वरो में सारिपुत्र ने कहा । उसके नेत्र सन्न हो गये । अधु वर्षा से यह धूमिल सन्ध्या और भी धूमिल हो उठी । उनी क्षीण आलोक में डावा न तथागत के उस पुनारी को विदा दी । स्पृष्ट पगङ्गिकाओं पर जब तक सारिपुत्र दिव्यभाषी पढ़ते थे वह उसी ओर देखती रही । अन्त में वह अस्पष्ट छाया भी सर्वदा के लिए विलीन हो गयी । डावा ने एक दीर्घ निश्वास ली और लौट पड़ी ।

X

X

X

X

पूर्व परिचित ध्वनि सुन कर उमन मूक उठाया । स्वर्गविरि को उपत्यका में स्थित वही नैनवोरी जोनका मन्दिर था । निच की भाँति उसके घण्टे का रव था । मन्त्र कुण्ड ज्यों का ‘यो वा किन्तु वा शन्य और उदास ।

भिक्षुक की बातें सुन उपस्थित नौबो ने उसे कुछ हन पात्र, कुछ मोन रह गए और शेष सभीन नौबो से कचहरो की ओर देखने लगे। चारनों बोक के—जिसे आबकल मुदनी बाजार कहते हैं—दक्षिणी दरवाजे के ठीक ऊपर उन दिनों कचहरो थी। न जनता में से उसको ओर कोई बड़ा और न कचहरो से ही किसी ने फाँरा। यह देखा भिक्षुक के अघरो पर उस भुवन मोहन मुस्मान की रेखा खिच गई जो यदि पुरान के मुँह लगती है तो उसे देखता बना देती है और जब नापी के अघर पर लगती है तब नापी कुलटा कहलाने लगती है। समवेत बनसमुह पर उसी मुस्मान की मोहनी डालते हुए उमने कहा “अच्छा अब चलता हूँ। कोतवाली जाकर तनिक कोनवाल का भी होमला देव भूँ।”

[दो]

पौष की सन्ध्या सिहने लगी थी। दाल-बर्छों में अमीर जान नवाबछ की दिव्य हवेली के दूसरे खण्ड वाले कमरे में खजाला ठनकने लगा था। दीवारों पर टंगे दीपों में दीपाधारों में मोमबत्तियों के गुल शिन चुके थे। लिङ्कियों के छत्रों में फूलों के गजरे लटकाने जा चुके थे। टेका, साणी और मजीरे की सहायता से अमीरजान पीन्नु पर ‘रियाज’ कर रही थी—‘परीहा रे, पी की बोली न बोल।’

अमीरजान ‘स्वामी’ समाप्त कर ‘अवरा’ पर आ ही रही थी कि उसी गली में हलबल की आहट लगी। उसने देखा कि सामने की लिङ्कियों में बंद्याओं का समूह बाहर यला निकाले गली में उत्सुकतावश कुछ देख रहा है। अमीरजान भी उठ कर लिङ्की पर आयी। उसने देखा कि बूटे अपाहिजों और भिगारियों को रुपय पैसे लूटाता मस्त मखर गति से गली में भगड़ भिक्षुक चलता जा रहा है। उसके पीछ पीछ आदमियों की बड़ी भीड़ है। नगर की प्रसिद्ध मन्दरी वीरागनाथ अपन अपन भगोसों पर इटी है परन्तु भिक्षुक की झण्ट चमोदक चक्कर लगाने में ला व्यस्त है, उसे ऊपर

[illegible][illegible][illegible][illegible]

खेने का अवसर ही नहीं मिल रहा है। सांदर्य का यह अपमान उसे सहन न हुआ। वह स्वयं भी नगर की प्रतिष्ठा बरखा थी। उनके रूप की तूनी गेली थी। नुर ने उसे असुर की शक्ति दे रखी थी और तान ने उसे मान बना रखा था। इन्हीं दोनों के उल यह हृदयों पर आधिपत्य जमाना था और उनके सारे रक्त का शोषण कर अंत में उन्हें बरबाद कर देती।

औरों की तरह उसने भी भिक्षुक को देखा, औरों ही की तरह वह भी उनके रूप पर मुग्ध हुई किन्तु यह देख कर वह औरों ने कहीं अधिक दुखी हुई कि अशक्तियों मोलयाली, उसकी मुत्तमान का मोती, भिक्षुक की नयन भ्रंशों में न गिर कर सड़क को धूल में लोट रहा है। और औरों से बड़ कर उसने कान भी किया अर्थात् परमाने का शररती साल अपने शरीर से उतार उसने भिक्षुक के ऊपर डाल दिया। भिक्षुक ने साल नीचे खींचने हुए चौंक कर सिर ऊपर उठाया। अनोरजान से उसकी चार आँखें हुई। विषय गर्व से भरी तुरी की धार जैसी ठोली मुत्तकान अनोरजान के अधर पर सेल गयी किन्तु वह डेर तक न बनी रह सकी। भिक्षुक ने निराला साध कर अपने हाथ की हथियाँ पंक्तों से भरी धँतों ऊपर उठा ली और वह दूरे जाँर से अनोरजान की नाक के सिरे पर तड़ाक से जा बँटी। उसकी नाक से रक्त टपकने लगा भानों किसी लक्षण ने पुनः किसी गूँजना का नादिका ऐन किया हो। भिक्षुक उठा कर ऐसे पड़ा।

टोक उसी समय बगत की नास्त्रिद से एक सदर्य, कुरूप और बूड़ी भित्तालि बाहर निकली। वह संकड़ी पंजर लगा पंजाना पहने थी। उसका कुराता तार तार हो रहा था और बादर के नाम पर उसके पान एक चौधड़ा मात्र था। उसने भी देखा भिक्षुक नाउड देखा। उसके भूँरपों से भाँ पाँपलें मुँह में एक विचित्र ध्वनि निकली जिसे हँसी भी कह सकते हैं। तानी भाँ तय का लक्षण पर सगरे का नाक भाँ देकर वह उन बड़े भाँ अपने । : अनोरजान = भिक्षुक का चिह्नक तान हुए जाती — बाग

जाई बेटा, पापाय । लोभो को भावना हुई कि कुछ मिथुक कहां बूढ़ी का इकेल न दे रिन्नु मिथुक ने दृष्टि और बाणी दोनों में कोनक भर कर कहा—‘माई तू कहाँ ! अच्छा आ ही गई तो कुछ खेतो जा ।’ और अपने नीत में धरपर बूढ़ी की काया पर अमीरगान की शाल डाल दी । बूढ़ी रदते में हुआ तक न दे पायो थी कि मिथुक आगे बढ़ा ।

...और कोनवाली आ गई ।

मिथुक के पीछे चलने वालों की संख्या अब तक हजार के ऊपर पहुँच चुकी थी । सभी उत्सुक थे कि देखें, कोनवाली बल कर कैसी निपटली है । मिथुक के बल, और बीबट, दास्य कोसल और दास्य ज्ञान, कुन्सी की निपुणता और मगीत की माधना आदि का हान बनात्म का बच्चा बच्चा जानता था । साथ ही नये अंग्रेजी राज्य के बायदे कानूनों की हृदयहीन पारदी का स्वाद भी कानी की जनता को अल्प समय में ही भित चुका था । उस जनता का पूरा विश्वास था कि आज अच्युत विराट् और ‘अवमि देखिये देखन जोगू’ जैसी कोई बात होकर ही रहेगी । स्वभाव में ही तमाशबीन कानी के नागरिकों की उत्कठा जाग गयी थी । परन्तु जब कोनवाली सामने आ गई तो कोरे तमाशबीन बनचाने लगे, बायर छिनगने लगे ।

वर्तमान चौक जाने के सामने जहाँ आज सरागिया खड़ी होनी है, एक कुर्चा था और कुर्चे के चतुर्दिक मैदान । तत्कालीन कानी में गोलगप्पे, कचालू की एकमात्र दुकान नित्य घास, उसी कुर्चे पर लगनी । जाने के दक्षिण डीक सामने मडक की पटरी पर कोनवाली थी । मिथुक ने कुर्चे की ऊंची जगह पर खड़े हो कोनवाली की ओर मुँह उठा कर आवाज लगायो—‘हुजूर कानवाल साहब !’ मिथुक उधारी पर आया है । क्या हुकुम होता है ।”

कोनवाल साहब भिन्न नर नर और दो एक बरकन्दाज, जा

बैंसी बीसो से अधिक उगीचड़े हुए मद्दम कण्ड में पूछा था—'स्वामीजी की तपस्या जब भी पूरी नहीं हुई।' और तब वह उने पहिचान कर पुन दूसरी रात आने का वचन दे बैठा। तभी से उनके मन में एक ही यत्न चक्कर काट रहा था कि क्या त्यागी हुई वस्तु पुनः ग्रहण की जा सकती है!

मंगलागोरी उसकी पत्नी थी। परन्तु उसने उमरा मृग जोश में तो ही बार देखा था। एक विवाह की रात और दूसरे तेरह वर्ष बाद पिछली रात। भिक्षुक ने अलवर के एक ऐसे चारण कुल में जन्म लिया था जिसकी जीविका का साधन कहरवा-भांड न होकर अग्नि संचालन था। उने जन्म ने ही व्यापार और उत्पन्न संचालन की शिक्षा मिली थी। तेरह वर्ष की वय में उनका विवाह जैसलमेर में हुआ। स्वमुर राजस्थान के प्रसिद्ध चारण थे। किन्तु ही राजाओं ने 'लाख पमाव'* और 'कोड पमाव'* से उनका सम्मान किया था। उत्तर वयन में उन्होंने नाथद्वारा जाकर कण्ठी बधवा ली थी। उसके बाद ही कन्या के रूप में उनके घर में प्रथम महान ने जन्म लिया। कन्या पिता के आँखों की पुतली हो गयी। जन-आने ही पुत्री पर भी पिता का रस चढ़ने लगा। पिता पूजा करते और पुत्री गोविन्दलाल की प्रतिमा के समक्ष नाचती हुई सोनली बोलो में जाती—“मे तो गिरिघर आने नाचू रीं।”

भिक्षुक की विवाह की रात की वह घटना याद आयी जब सातवर्षी समाप्त होने पर ससुराल की स्त्रियो ने उसकी कविता और दोहा सुनाने के लिए कहा और वह मोन रह गया था। कारण तब तक उसे अपना

* राजस्थानी नरेशों के यहाँ प्रथा थी कि वे किसी कवि या चारण का सम्मान करने के लिए हाथी, घोडा, भूमि, हथियार गत्त आदि मिला कर उसे ३० ४० हजार रुपये की रकम दिया करने थे। उस ही लाख पमाव और कोड पमाव कहने थे—मिश्रदत्त—उत्तमनाद कोटि पमाव।

के बिनाने स्विन अपनी मड़ी नुमा खोह में प्रवेश किया। डोबट पर मृत्युशय जल रहा था और भूमि पर शङ्खम्बर पड़ा था। उनी पर बँड गाँजे को दम लगाने हुए वह विचार करने लगा।

अभी तक वह हम प्रश्न की सीमाया न कर पाया था कि जिसरा स्थान पर दिया उसका पुनर्ग्रहण उचित है या नहीं, बिधि और नियम दोनों पहलू उसके सामने जाने थे। त्यागो हुई वस्तु उच्छिष्ट है। मानो उसे ग्रहण नहीं करने। नारी मायना पद का अन्तराय है, मैं मायक हूँ।

पुन दूसरे ही क्षण वह सोचता—‘गोरी मेरी महर्षिमिणी है। वह जैसी नुन्दरी है वैसी बुद्धिमती भी। उसमें मुझे कर्तव्य बालन में सहायता ही मिलेगी। उसका मैंने वाणिग्रहण किया है। मैं उसे बचन दे आया हूँ। वह मेरी प्रतीक्षा करती होगी।’ प्रश्न के इस सामाजिक पहलू ने निर्णय कर दिया। वह अभिभूत सा धीरे-धीरे खोह के बाहर निरला। एक नाव खोली। उस पर बैठ उसने उसे घारा में छोड़ दिया और स्वयं भी विचारभारा में वह चला। उसके हाथ कन्धवर् नाव खेते रहे थे। वह सोच रहा था कि यदि वह न होती तो सिपाही मुझे जबरन पकड़ लेते। मैं तारी हाथ पका माँझ और पैदल था, वे हथियारबद, पोढ़े पर सवार थे। न जाने कौन पहचान लिया दुष्टों ने। जंगीनगर से बटेसर तक राह मारा। पर उन्हें भी पता चला गया होगा कि आज किसी से वाला पड़ा है। सब तो पीछे रह गये, परन्तु यह ससुरा हवलदार, उसने अंत तक पीछा न छोड़ा।

नाव विनारे लग गयी। भिक्षुक उस पर से उतरा। रेंती में छूटा गाड़ कर उसने नाव उसी में बाँध दी और स्वयं गाँव की ओर चला। पीसी चाँदनी में शृगाल चद्रमा की ओर मुंह उठा उठाकर पोत्कार कर रहे थे। गाँव में पहुँचने ही कुत्ते उसके पीछे पीछे भूकने चले। मगलागोरी के आंगारे के नामने पहुँच भिक्षुक ने देखा कि ओसारे में काँड की थोड़ी पर बँडा वहीं हवलदार मछो पर हाथ करता हुआ बड़े म्बर में रामायण की बीपाइवी

‘अच्छा !’—गौरी ने विष्णु का अभिनय करने हुए कहा ।

‘अच्छा क्या ? नोचा या तुम्हें भी साथ लेती चलूँ । निडकी के नीचे खड़ी होकर कितना चिल्लायी । रोत्र तो तुम चार बजे मोर में ही उड़कर क्या क्या याया करती थीं । आज तुम्हारी आहट ही नहीं मिली । हाँ, यह गीत तो यादो, जीयो, ’ “मूढ़ने आकर राखो जी, पिरपाये लाजा ।” गेंदा ने कहा और वह खिलखिलाकर हँसी फिर तत्काल सज होकर बोली—‘अच्छा जीयो, ये नय गीत तुमने सीने कहा ?’

आहट गेंदा प्रश्न पर प्रश्न करती आ रही थी, बिना यह खयाल किए, कि उसके प्रश्न गौरी के हृदय पर हृषोटे की चोट कर रहे हैं । फिर गौरी ने कहा—‘इसमें बनाने की क्या बात है ? मेरे बाप भी गोविंददास के उपासक थे न । उन्हों से यह सब सीखा है । उनके गोलोक धाम जाने पर अब श्यामो ने मेरी सब सम्पत्ति छोन ली तो मैं अपने माना के पास चली आयी । मामा ने जब काशी राज की सेना में नोकरी की तो मैं भी यहाँ चली आयी ।’

‘अच्छा एक गीत गाओ जीयो ! मुझे बड़ा अच्छा लगता है’—गेंदा ने कहा ।

‘इस समय वित्त ठिकाने नहीं है, गेंदा ! फिर कभी पाऊँगी ।’

‘नहीं, मेरी अच्छी जीयो ! दो ही एक कड़ी मुता रो —गेंदा ने बच्चों की तरह मचलते हुए कहा । अंत में गौरी को गेंदा के हठ के सामने झुकना पड़ा । उसने शय्य शय्या की ओर दण्ड मुनमुनाता आरम्भ किया—

तरी मैं ना दरद-दिवापो

मरा दरद न जान काय ।

मरी जय नज गिरा की

दरद 'की' न 'म' ना काय ।

"वरो साहब, हम आज हिन्दुस्तान का जानने ।"

"लड़ाई सत्य होने पर । वरों, क्या यह देश समझ नहीं ?"

"नही साहब, सिक्खार के वे मजे यहाँ कहीं ? याद है, पारमान नकल लड़ाई के पीछे हम आज क्या-करी के जिने में सिक्खार करने गये थे—
"हाँ, हाँ"—"वही आज जब नील पर सवार थे और आज का मानमाना अबदुल्ला रास्ते के एक मन्दिर में जल-बझने को रह गया था ।" "जेशक रास्ते कहीं का"—"सामने से वह नील साथ निम्नी कि ऐसी यही मने कभी न देखी थी । और आज को एक बोलो कथे में लगी और पुद्दे में निम्नी । एने अपनगर के साथ सिक्खार लेलने में मजा है । क्या साहब, सिमले ने तैयार हो कर उस नीलसाथ का मित्र आ गया था ने ? आने कहा था कि रोयामट की मेम से लमायेने । "हो, पर मने वह विमान भेज दिया"—"एने बजे-बजे मीन । दो-दो फुट के तो हाथे ।"

"हाँ लहनासिह, दो फुट चार इंच के थे । तुमने सिगरेट नहीं पिया ?"

"पीता हूँ साहब, शिमानलाई ने आना हूँ"—"रहकर लहनासिह सबक म घुसा । अब उमे, मदेह नहीं रहा था । उसने कज्जद निद्वय कर लिया कि क्या करना चाहिए ?"

अंधेरे में किसी सोने-बाँके से वह टकराया ।

"कौन बड़ी-साहिब ?"

"हाँ, वही लहना ? क्या क्या-मन आ गई ? बरा-बरा लगने दी होती ।"

[४]

"होश में आया । क्या-मन आई है और लपटन साहब की बड़ी पहनकर आई है ।"

"क्या ?"

"लपटन साहब या तो मारे गए हैं या कंद हो गए हैं । उनको बड़ी पहनकर यह कोई जमान आया है । मजदार न इसका मुह नहीं देखा, मने

क्रय-विक्रय का आदर्श

ਮੀ ਸੁਖਾਸ਼ਿ ਚੜ੍ਹ ਕੁੰਧ

‘तुम भादुन, वरु तुम बावली को पीले-पीले टुकड़ा हुआ था कहा है,
मिनत हो, कौन है?’

ਭਾਗ ੧ ਨੂੰ ਪਾਉਣ ਅਤੇ ਪੜ੍ਹਨਾ

नीहने ने अनाई दिया—ये तो नदी बगल का था । पर उस के अनाई के
छाई जमा दिया। उसने नदी, जिसके बगल की मूल्य कायमकता ही है ?

वाचा—वृक्षों के लिये जो पत्तियाँ हैं, वे सब पत्तियाँ ही हैं।

मार्ग—इसके पक्ष / दुकान का लुप्त से कहीं जा रही थी की ही मर गई। १५वां १५वां का लुप्त है कि किम्वद गाथा कहती है, इसमें लुप्त ही लुप्त बन चुका है। यह अलुप्त इसका है जो का है ही। का है यही वह बन गया किम्वद इसका अलुप्त यह उदाहरण है।

[illegible]

1000

The figure consists of five separate bar charts, each representing an age group. The y-axis for all charts is labeled 'Percentage' and ranges from 0 to 100. The x-axis for all charts is labeled 'Age Group'. Each chart has two bars: one for 'Important' and one for 'Not Important'.

Age Group	Important (%)	Not Important (%)
18-29	~75	~25
30-39	~80	~20
40-49	~85	~15
50-59	~90	~10
60+	~95	~5

पर पर अपना जो बहन बरबाद करने हो, क्यों न उसको राखि-पाटमाथा में बिनाओ। अभी यह सोचें नो बहुत अच्छा होगा।

बन, फिर क्या था, रामधन राखि-पाटमाथा में पड़ने लगा।

इसी तरह दो मान और बीन गए। अब रामधन को बेन में (१२) मिलते थे। ७) महीने की बचन वह अब उसमें बराबर कर ही रहा था। इन तरह कुल मिलाकर अब उसके पास लगभग पौख सी रुपये हो गए थे जो मैरिंग बैंक में उसी के नाम से जमा थे।

उन्ही दिनों जगत बाबू का एक मकान बन रहा था और उस मकान में उनका मारा रुपया लग चुका था। जाड़े के दिन थे, माल करीब-करीब चुक गया था। और नया माल भंगाने के लिए अब उनके पास और रुपये नहीं रह गए थे। मोच विचार में बैठे बैठे वे इनने उद्गम थे कि चित्ताभाइ उनकी मुझी में स्पष्ट भलपता था। दूकान बड़ाकर जब वे घर चलने लगे, तो रामधन ने पूछा—बाबू जी, अगर आप मुझे माफ कर दें, तो मैं एक बात पूछूँ ? आप आज किसी बिना में इतने हुए जान पड़ते हैं ?

जगत बाबू—लेकिन तुम उस बिना को दूर नहीं कर सकते।

रामधन—लेकिन बाबू, कुछ मालूम भी तो हो। मैंने आपका बहुत नमस खाया है। अगर किसी काम का सचूँ, तो आप मुझे उसके मोके से दूर क्यों रकने दें ?

जगत बाबू—कुछ रुपये की जरूरत आ पड़ी है। दूकान में माल इस कदर कम है कि अगर एक हजार रुपये का और इन्तजाम न हुआ, तो दूकान उठा देने पड़गी। उसके बाद क्या होगा वही साचना है। चाई तो मकान के माथार पर वज्र मिरा सकता है। पर यह बात है किनी बह्मजी की कि मकान पूरा बन भी न पड़े और उस गिरवी रखन की नीचन आ जाय। पर मैं अब मूर्ख क म दा हजार का हूँ। बीबी मैं उसे उतरवाऊँ हूँ या पर का शक्ति कम होगा है। क्या करूँ क्या न करूँ, कुछ समझ

जगनबाबू बोले—मेरी मृष्टिची ने कम गत में कहा था रामधन का रूपया बहुत फलना है । इस साल बिनना लान हुआ उनका कभी नहीं हुआ था । हमने तो अच्छा है, दुकान में उसका एक जाने का हिस्सा कर दिया जाय । सो इस साल को जो आमदनी हुई है, उसके तुम्हारे हिस्से की गम दो सो के लगभग होती है । पांच सो तुम्हारे जो पूंजी है, वह इसमें अलग है । कुल मिलाकर ३००) होते हैं । ये रुपये या तो तुम मुझ पर ले लो, या दुकान के हिस्से के रूप में जमा रखो ।

मोहन इसी समय बोल उठा—उस दिन से रामधन जगन बाबू की दुकान में एक धाने का हिस्सेदार हो गया ।

बाबा—लेकिन रामधन की उन्नति का यह इतिहास तो अभी प्रारम्भ का ही है । इसके बाद जो उसका अमली विकास हुआ, उसकी कथा भी कम रोचक नहीं है । मृष्टि का यह चक्र बड़ा विचित्र है । किसी के उत्थान के साथ किसी का पतन मिथित है, सलम है, कोई नहीं जानता । जगत बाबू एक दिन इस अमार समाज को छोड़कर चले गये । और तब यह सब, उनके वे बच्चे, जो अभी पढ़ ही रहे थे । दुख-गुम तो जीवन के साथ लगे हैं । किन्तु काल-चक्र तो अपनी गति में चलता ही रहता है । जगत बाबू को मनुष्य की पहचान थी, वे रामधन की विकासशील प्रतिभा और ईमानदारी से परिचित थे । परन्तु उनके देहावसान के बाद, उनके बड़े लड़के, जो यूनिवर्सिटी में पढ़ रहे थे, रामधन से परिचित न थे । कुछ भाषाशास्त्रियों ने उनके वान भर दिये । और उसका फल यह हुआ कि रामधन को उसका हिस्सा देकर उन्होंने उसे दुकान में अलग कर दिया ।

यह सब कुछ हुआ किन्तु रामधन के हृदय में कोई अन्तर नहीं जाना था । दुकान में अलग होकर उसने अलग दुकान तो कर ली, पर जगत बाबू के परिवार के प्रति उसकी धृष्टि का भाव अब भी कम नहीं हुआ था ।

हो चुका, वह हो चुका । उसका उपयोग ना आदमी समय आने पर करेगा ही ।

चाचा—एक दृष्टि में तुम्हारा यह कहना ठीक है । पर प्रायः होता यह है कि लोग अत्यधिक लाभ में होने वाली रकम को अपने निजी उपयोग में लाते हैं । किन्तु रामधन ने ऐसा नहीं किया । उसने उस रकम को वस्तुओं का मूल्य घटने के सकट-काल के लिए सुरक्षित रखा ।

मोहन—अच्छा फिर ।

चाचा—उसकी दूरान इस बात के लिए भी प्रसिद्ध थी कि एक तो उसने माल विमुक्त और नया मिलता है, दूसरे भाव-साध करने की आवश्यकता नहीं पड़ती, नव वस्तुओं का दाव निश्चित है । कोई भी व्यक्ति, चाहे वह बच्चा ही हो, बाला जाय, बालों में कोई अन्तर न होगा ।

मोहन—अच्छा, माना कि एक विशेष कोष के संबंध में उसने एक नया प्रयोग किया । लेकिन इसका परिणाम आखिर क्या हुआ ?

चाचा—परिणाम यह हुआ कि कुछ वर्षों के बाद जब वस्तुओं का मूल्य बराबर घटने लगा, तब उसके समान कुछ अन्य व्यवसायी तो पाटे में आकर समाप्त हो गये, किन्तु रामधन के व्यवसाय पर उसका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा ।

मोहन—अब, ठीक है । किन्तु यह प्रयोग उसे सूझ किस तरह ?

चाचा—बाल यह है कि रामधन अब इतना समर्थ हो गया था कि धर्मशास्त्र की बारीक बातों के समझ सकता था । उसका अध्ययन लगातार जारी था । एक बार उसने किसी अचक्षात्की से बार्तालाप में धर्म-विक्रय के आदेश के संबंध में बहनेरी बात जान ली थी । अचानक आने पर उसने उसकी प्रशंसा किया और उस मफलता मिली । और इसी तरह वे रामधन उन्नत करने-करने आज दिन गया । ऊर्ची प्रसिद्ध को पहुँच गया है ।

नोहन—तो स्व-विषय का आदेश आप ही के कर्णों से एक लम्बे पंक्ति दिया जाय। ताकि विष्णु का सम्मेलन बहुत ही जल्दी कर्णों के मुख से जाने पर लाभ के एक अर्थ का विवेक करके रूप में मानने लगे। बाद, जो उस समय काम आये उस कर्णों का मन्त्र पढ़ रहा हो। अन्तर्गत विष्णु और तब ही जाय और नवके लिए इस एक हो।

नोहन—हाँ इस मात्र रूप में को दही है।

बाबा-भतीजे से जाने कर्णों हुए जिस समय धूम कर लीट रहे थे उस समय रानधन भी उधर में आ निकले।

नोहन साँपने लगा—मनुष्य धूल भरा होता है। कौन जानता था कि एक अनाम बालक एक दिन इतना बड़ा आदमी बन जायगा।

कहानी-परिचय

आत्माराम

श्री प्रेमचन्द जी की सर्वोत्तम कहानियों में आत्माराम एक है। बेटी घाम का गूढ़नेवाला मुनार महादेव अपने लोने की बहुत चाहता है। और सखीकाय लोने की पकड़ने जाने की दौड़ में उसे अराधियों का दूध मिला जाता है। इस धन की प्राप्ति से उसका मन हो बदल जाता है और वह धन की ओर उन्मुख हो जाता है। उस धन से उसने पुष्प कापें बिचे और आज भी बेटी में उसकी कीमि माई जाती है।

प्रेमचन्द जी की कहानियों की भाषा कहानी के लिये सभी गुणों से युक्त है। सर्वमुषम होने के साथ उसमें जो एक बात सबसे विशेष है वह मुहाबिरी का प्रयोग है। हिन्दी साहित्य में इनके सुन्दर रूप से मुहाबिरी का प्रयोग करने वाला अन्य कोई भी नहीं है। इनको अनेक कहानियों के समान यह कहानी भी ग्रामीण वातावरण को लेकर है। चरित्र चित्रण की दृष्टि में श्री प्रेमचन्द जी कहानी लेखकों में सबसे बढ़कर है।

महादेव का चित्रण बड़ा स्वाभाविक हुआ है। गाँव के मुनारों में धाड़ की अनेक ऐसी दिखेंगे जिनमें महादेव के पूर्व जीवन से पूर्ण साम्य दिखेगा। जैसे अर्थ विनाश धाड़ भी गाँवों में है तिनका प्रात नाम लेता अनाहुन समझा जाता है।

धन मिलने पर उसमें होने वाला परिवर्तन भी स्वाभाविक ही है।

रोचकता इस कहानी में बहुत है। आरम्भ करने पर समाप्ति के पूर्व छाड़ पाना सम्भव नहीं। महाविद्वान् भाषा के भाष्य यह कहानी गाँवों के जीवन की एक जड़की भी प्रस्तुत करता है।

बुद्धमल का कठपुतली की तरह नाचन न देख मरने से और समय बुझने का भय न हो ।

मल्लमल के होने ही स्वार्थी नाचियों की जन श्राव । धन धनों की तरह बहाया जाने लगा । व्यापार की आर ने उदासीनता दिख गई जाने लगी । कलशकल्प अब एक दिन एक दृष्टी के भूमिगत की बात आई ना जान हुआ कि क्या नहीं है । यही शोक घुप हुई पर गल स्वयं । अन्य में मल्लमल बुझाये गये । उन्होंने अपनी कपुर्गाई में बैठ कला दूर कर दी । उनके गलबान अपने घर चले गये ।

अब बुद्धमल की मल्लमल मनीष का मुख्य भाग हुआ । उन्होंने गल प्रगल्भ किया कि वे लौट आये और अपने पुगने कार्य को संभालें । पर नीर श्राव में बाहर जा चुका था । मल्लमल किसी प्रकार नैवार न दृष्ट जो बुद्धमल को श्राव मल्लमल रहना पड़ा ।

भाषा सर्वसुखम वसोपवन प्रजापती सुन्दर, कहानी मित्राणां भूषा मनाग्रक है । किसी काम के करने में उन्दी न करनी चाहिये और बहुत साथ समझकर मंत्र में बात निहालनी चाहिये । जो उन बातों का ध्यान नहीं रखने उनकी वही दया होनी है जो बुद्धमल की है ।

गुरुशामन

श्री गुरुदेव नन्द श्री वनों की दृष्ट कहानी पुगने लायिका की बात का एक लोकी उम्मेद करनी है ।

गुरुदेव शक्ति का कर्मा है । बाबा क हिन्दू कर्माई का बरी पूजा की दृष्ट में देखने है । उन कोई अल दान गुरुदेव मल नहीं दया । पर शक्ति वसोपवन की कलश मल वसोपवन मल के मलने शक्ति गुरुदेवमान की दृष्ट मल कलश मल के मलने मल मल मल मल मल मल । कर्माई

करने वालों ने उसे एक मभा का नभापनि ही बना डाला । ऐसे काट के उलटुओं की पोंछ कभी न कभी गूँथनी ही है । पलटूगम की भी पोंछ गूँथी भाषण भिन्ना हुआ पड़ मरना उनकी सामर्थ्य के बाहर था 'न' वह छान गया । परन्तु मुद्रणालय की भूल से 'न' की जगह 'म' छप गया । और जब वही 'म' की जगह से 'म' थी पलटूगम जी नभापनि ने पकता शास्त्र किया तो इसी के फोवारे मूटने शास्त्र हो गये । और नभापनि जी को मुह लटका कर नीचे उतरने पर बाध्य होना पड़ा ।

श्री कृष्णदेव प्रसाद जो गोड 'वेडव' हास्यरस के मफल सेमक हैं । उनकी इस कहानी में भी हास्य सर्वत्र वर्तमान है । हास्य रस की कहानियों का हिन्दी साहित्य में बड़ा अभाव है । वेडव जी का इस क्षेत्र में काय प्रगमनीय है ।

परिचर्तन

श्री करुणापनि जी त्रिपाठी द्वारा लिखित यह कहानी भारतीय सभूति स्मरण करनेवाली है । प्राचीन भारत में स्वाभिमान की भाषा अस्पष्टिक थी । शत्रु और जल धनिक न होते थे । एक बार हार जाने पर पीड़ी दर पीड़ी बदले की भावना बनी रहती थी । और जब तक बदला चुका न लिया जाना वह शूण के समान भाग बना रहता । इस कहानी में यह अनीत मजबूत हो पड़ा है ।

भद्रदल और उसका पुत्र राजाशा से राजसीर में प्राप्त हुए सम्पति से शास्त्राथ करने लगे और राजसीर की विदुषी द्वारा सम्मोहित होकर उन्हें गार माननी पत्नी है । उमर के कारण भद्रदल को फोमो मयाकर मने के लिए जाना पड़ता है । पिता का मया का कारण जानने पर पुत्र बदला उन पर कटिबद्ध जान है । राजसीर उन जाना है । उसकी मय्या मफल माना है । राजसीर का मया का कारण जानने के साथ मया के

भाषा सरल तथा कहानी के योग्य है। वर्णन के प्रभावशाली इन ने कहानी को नवीन बना दिया है।

डाया

सुधी उमा कुमारी द्वारा लिखित यह कहानी वर्धनात्मक स्त्री की है। डाया विधवा स्त्री समाज को लक्षित किया है। तथानुसार की पुत्र के पश्चात् उद्यम पर जब उसे ज्ञात होता है कि मुप्तचर होने का अवसर मिलाकर सारिपुत्र का मृत्यु दण्ड दिया जाने को है तो उनकी जीवन रक्षा के लिए वह चल पड़ती है। मार्ग के अनेक विघ्न बाधाओं को लक्षित हुई वह सारिपुत्र के पास पहुँचती और उन्हें छुटाने का उपक्रम करती है। सारिपुत्र पहले तो इस पर तैयार नहीं होने पर अन्त में मान जाते हैं और वह स्थान छोड़ देते हैं। मुप्तचर की भावने में सहायता देने के अवसर में पिता पुत्री बन्धन के भागी होने हैं।

कहानी में भाषा की सरलता तथा भाग प्रासंगिकता है। सारिपुत्र की जीवनरक्षा के लिए डाया का त्याग प्रशंसनीय है।

मूली ऊपर सेब पिया की

मूली ऊपर सेब पिया का भी यह जी की नवीन रचना है। कानों के अनेक वैभव की मायाय कानों के बूझों के मुख से आने भी सुनी जाती है। उन्हीं में से यह भी एक है। पण्डित यह जी की कथन प्रणाली ने अनेक को संतान मिला दिया है। पाठक पढ़ने समय भूल जाता है कि वह कहानी पढ़ रहा है। मित्रक का मूल-दुष्ट उमका अपना हो जाता है। यह कहानी न ललित ही पढ़ता है।

उस अर्थाने में जिस प्रकार कहा जाता था किमिद मरकार परमाणु या भीतर किमिदो पकड़ने के लिए तन्मिनीयिक की पालना हो चुकी थी

न सागर हा कोई स्वयं पूरा भिन्न नहीं। यह एक बाहर भी निकलता याव
भीरु निकलता न बाहर न पार। जिसद्वारा देवक की मरलगा उसकी हृदि
क मन्त्र न बन को ही दमन न जान होती है किनी अज्ञ क देखन न नहीं ।

कहानी की दूसरी विशेषता इसमें निहित राजनस है। यह कहानी इसी राजनस है कि राजनस को अपने प्राप्ति करने का यह विचार माना कि यह ही है नहीं सत्यता।

कहानी जहाँ गुरुदत्त साहब का रहना है जब उसका पड़रप जादूक
 रस इहाँ केनाके पड़ुईने जान सज र रस कर सज्जक नई श्यावा बा। "उमन
 कहती बा। कहानी उस कसादा रस नी लगी जगनी है। जयक न बाड़े स
 नदुई क ड कसा ड। बाज पाज जोर पागई सीत बा। इनहा पूरा अविहार
 है। जूनी सज्जक बाज पड़ना डूईक जयक न बाजनी बाबा दया वजन जिया डू।
 इहाँई का नहाज कनी नी कीहनेवा नी न दजन रस नी गह सज्जक क डीकार
 क नहाई नदुई नी न जानाई क नहाई सीत स उम सज्जक डी पूरु कस न
 नहाई नी कीकनी कसा ड। नहाई का पावा क नदुईक कसा ड नी जयक न
 इनके बाज न गीदगा है। कसाड कनक का इनहा गहव उहाहास कसा ड न
 २१ अरुन इमन का १५२।

अथैतद्व्यस्य स आद्यं

22. 某公司 2012 年 12 月 31 日资产负债表显示：流动资产 1000 万元，非流动资产 2000 万元，流动负债 400 万元，非流动负债 600 万元。2013 年 1 月 1 日，该公司流动资产为 1100 万元，非流动资产为 2100 万元，流动负债为 450 万元，非流动负债为 650 万元。则 2013 年 1 月 1 日该公司的资产负债率为（ ）。

